ऋग्वेद ओ३म् यजुर्वेद

पवमान

(मासिक)

मूल्यः ₹ 20

वर्ष : 32 माघ–फाल्गुन वि0स0 2076 अंक : 2 फरवरी 2020

मुद्रकः सरस्वती प्रेस, देहरादून वजनः 50 ग्राम

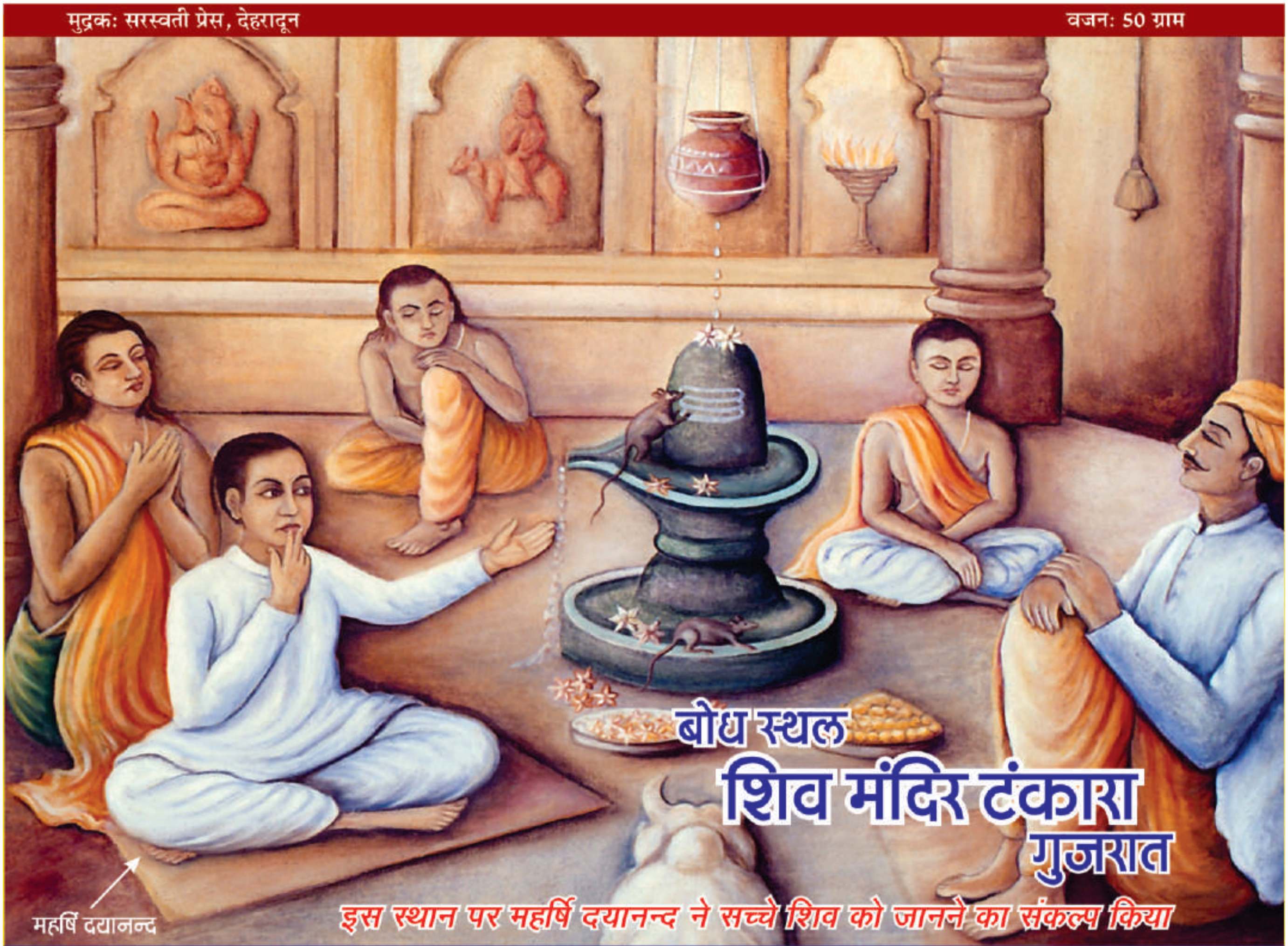

बोध स्थल
शिव मंदिर टंकारा
गुजरात

इस स्थान पर महर्षि दयानन्द ने सच्चे शिव को जानने का संकल्प किया

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, नालापानी, देहरादून–248008

सामवेद अथर्ववेद

पवमान पत्रिका हमारी वेबसाइट www.vaidicsadhanashramdehradun.com पर भी उपलब्ध है।

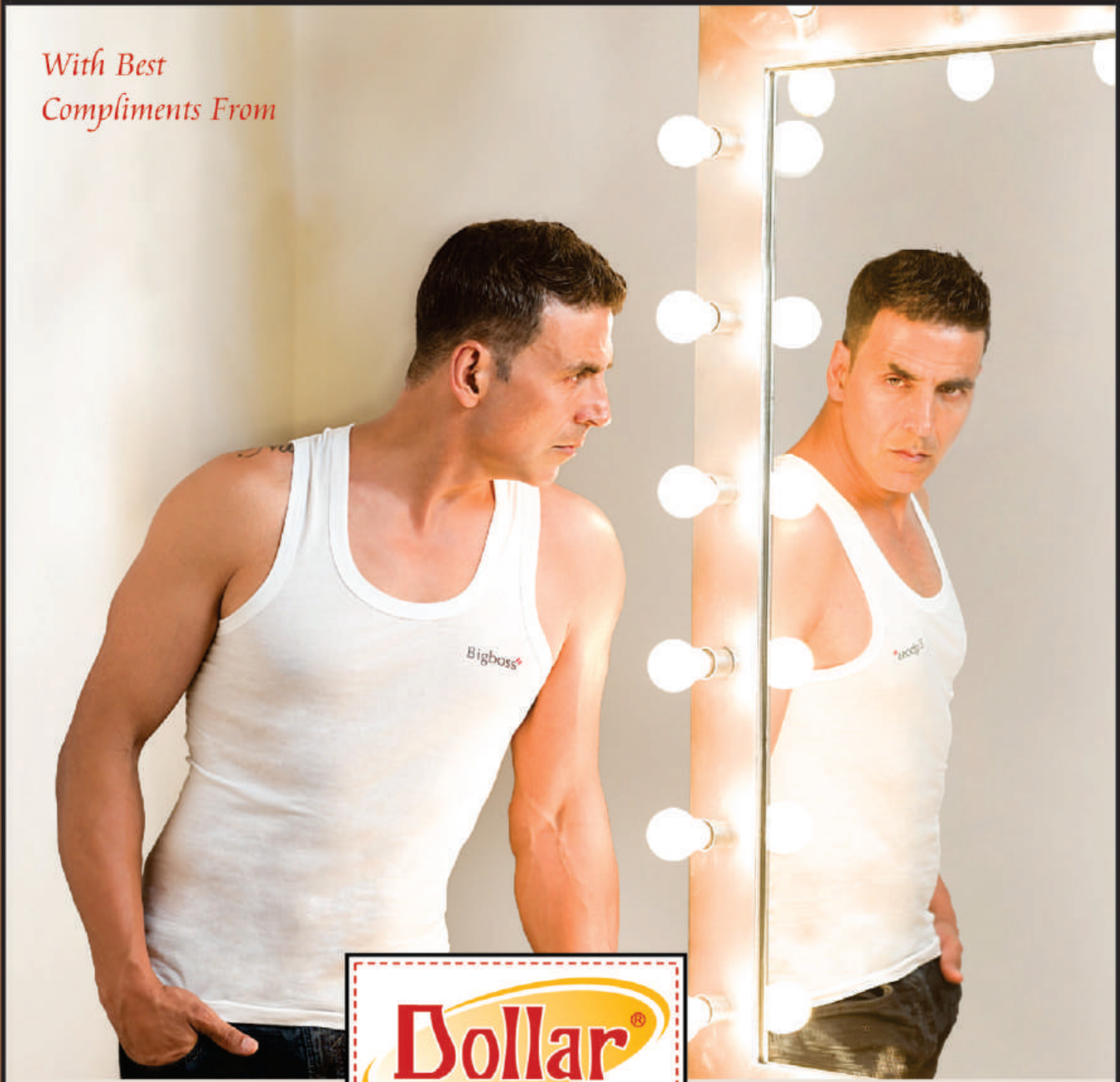
With Best
Compliments From
Bigboss

Dollar®

Bigboss
PREMIUM INNERWEAR

Fit Hai Boss

www.dollarglobal.in | Buy Online: www.dollarshoppe.in | Also available at all leading shopping portals
Dollar products are available in over 800 cities/towns and 100,000 MBOs across India | Govt. Certified STAR EXPORT HOUSE

ओ३म्

पवमान

वर्ष—32 अंक—2
माघ—फाल्गुन 2076 विक्रमी फरवरी 2020
सृष्टि संवत् 1,96,08,53,120 दयानन्दाब्द : 195

★

—: संरक्षक :—
स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती
मो. : 9410102568

★

—: अध्यक्ष :—
श्री दर्शनकुमार अग्निहोत्री
मो. : 09810033799

★

—: सचिव :—
प्रेम प्रकाश शर्मा
मो. : 9412051586

★

—: आद्य सम्पादक :—
स्व0 श्री देवदत्त बाली

★

—: मुख्य सम्पादक :—
डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री
अवैतनिक
मो. : 9336225967

★

—: सम्पादक मण्डल :—
अवैतनिक
आचार्य आशीष दर्शनाचार्य
मनमोहन कुमार आर्य

★

—: कार्यालय :—
वैदिक साधन आश्रम, तपोवन,
तपोवन मार्ग, देहरादून—248008
दूरभाष : 0135—2787001
मोबाईल : 7310641586

Email : vaidicsadanashram88@gmail.com
Web-www.vaidicsadhanashramdehradun.com

विषयानुक्रम

सम्पादकीय	डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री	2
वेदामृत	आचार्य डॉ० रामनाथ वेदालंकार	3
वेदाधारित सिद्धान्तों का संविधान पर प्रभाव	डॉ० कृष्णकांत वैदिक शास्त्री	4
ऋषि दयानन्द के उपकारों से उऋण....	मनमोहन कुमार आर्य	7
मूर्तिपूजा का खंडन	लाला लाजपत राय	10
रावण की सभा में हनुमान	ईश्वरी प्रसाद प्रेम जी	12
अनोखा जिज्ञासु	यशपाल आर्यबन्धु (मुरादाबाद)	15
विलक्षण महर्षि—दयानन्द जी	महात्मा चैतन्य मुनि	17
भारतीय पर्व और शिवरात्रि	प्रा० भद्रसेन	19
दयानन्द की मृत्यु पर पत्रों की सम्मतियाँ	मनमोहन कुमार आर्य	22
दयानन्द के प्रति विख्यात लोगों की श्रद्धांजलियाँ	मनमोहन कुमार आर्य	25
सुखस्य मूलं ब्रह्मचर्यम्	ब्र० विशाल आर्य	29
तपोवन आश्रम का वार्षिक कलैण्डर		32

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून के बैंक खातों का विवरण

दान हेतु बैंक खाते का नाम	बैंक का नाम व पता	बैंक अकाउन्ट नं.	IFSC Code
आश्रम को दान देने के लिये			
1. ''वैदिक साधन आश्रम''	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101001530	CNRB0002162
पवमान पत्रिका शुल्क			
2. ''पवमान''	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101021169	CNRB0002162
सत्संग भवन एवं आरोग्य धाम के निर्माण में सहयोग हेतु			
3. ''वैदिक साधन आश्रम''	ओरियन्टल बैंक ऑफ कामर्स 17 राजपुर रोड, देहरादून	00022010029560	ORBC0100002
तपोवन विद्यानिकेतन स्कूल के लिये			
4. 'तपोवन विद्या निकेतन''	यूनियन बैंक, तपोवन रोड, नालापानी, देहरादून	602402010003171	UBIN0560243

पवमान पत्रिका में विज्ञापन के रेट्स

1.	कलर्ड फुल पेज	रु. 5000 / — प्रति माह
2.	ब्लैक एण्ड व्हाईट फुल पेज	रु. 2000 / — प्रति माह
3.	ब्लैक एण्ड व्हाईट हॉफ पेज	रु. 1000 / — प्रति माह

सदस्यों के लिए पवमान पत्रिका के रेट्स

1.	वार्षिक मूल्य (12 प्रतियाँ प्रति वर्ष)	रु. 200 / — वार्षिक
2.	15 वर्ष (आजीवन) के लिए मूल्य	रु. 2000 / —

नोटः पवमान पत्रिका फुटकर विक्रय के लिए उपलब्ध नहीं है।

पवमान में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र देहरादून ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

सम्पादकीय

महर्षि दयानन्द सरस्वती

स्वतन्त्रता, स्वराष्ट्र व स्वभाषा के प्रबल पक्षधर महर्षि दयानन्द सरस्वती का सम्पूर्ण जीवन व कृतित्व आध्यत्मिकता और राष्ट्रीयता से परिपूर्ण था। राष्ट्रप्रेम उनके लिए सर्वोपरि था। उनका विचार था कि पराधीन व्यक्ति समाज और राष्ट्र के लिए अधोगति का कारण बनता है। महर्षि ने सन् 1874 में 'आर्याभिविनय' नामक एक ग्रन्थ की रचना की जिसमें लिखा गया था, ''अन्य देशवासी राजा हमारे देश में कभी शासन न करे। हम कभी अधीन न हों।'' इससे प्रमाणित होता है कि महर्षि दयानन्द भारतीय स्वातंत्र्य की कल्पना करने वाले पहले व्यक्ति थे। उनसे प्रभावित होकर अनेक युवा स्वातन्त्र्य संग्राम में कूद पड़े थे और इनमें से कई ने इस संग्राम में अपने प्राणों की आहुति दी थी। इन शहीदों में स्वामी श्रद्धानन्द, लाला लाजपतराय, चन्द्रशेखर 'आजाद', भगत सिहं, राम प्रसाद बिस्मिल, श्यामजी कृष्ण वर्मा, वीर सावरकर, आदि प्रमुख थे।

महर्षि दयानन्द एक महान् योगी थे जिनकी योग में अप्रतिम प्रवीणता थी। उनके विचार से विज्ञान तो केवल भारतीय साहित्य, वेद व दर्शनों में है जो ऋषियों द्वारा वैज्ञानिक चिन्तन से प्राप्त किया गया था। वे स्वयं एक महान् चिन्तक थे। प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति का उन्होंने गहन अध्ययन व विश्लेषण कर ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास, इन चारों आश्रमों का शास्त्रानुसार पालन करने पर बल दिया था। उनका शैक्षिक चिन्तन ज्ञान, विज्ञान और तत्त्व दर्शन से परिपूर्ण है। उनका कहना था कि संस्कार संस्कृति पर आधारित हों तभी बच्चों का बुद्धि विवेक जागरित होगा और उनमें राष्ट्रीयता और सामाजिकता की प्रबल भावना का उदय होगा। उनके द्वारा वेद, वेदांग और भारतीय दर्शन के पठन–पाठन पर बल दिया गया था। उन्होंने भ्रम, अंधविश्वास और कुरीतियों को दूर करने का सदैव प्रयास किया। अपने विचारों को महर्षि ने सत्यार्थप्रकाश नामक अपने कालजयी ग्रन्थ में लिखकर अनेक भ्रान्तियों और रूढ़ियों को दूर किया जिनमें स्त्री शिक्षा का प्रचार–प्रसार और बाल–विवाह का घोर विरोध करना प्रमुख था। उनकी दृष्टि में धर्म वह है जिसका कोई विरोध न हो सके। जो सत्य है उसका मानना–मनवाना और जो असत्य है उसका छोड़ना उन्हें अभीष्ट था। 10 अपैल 1875 को इस उद्देश्य से आर्य समाज की स्थापना की। स्वामी दयानन्द की यह एक बड़ी देन है कि भूले हुए वेदों का उन्होंने फिर से हमें परिचय कराया और वेदों के ज्ञान को समस्त विद्याओं का मूल बताया। उन्होंने न केवल वेदों का भाष्य किया अपितु ऋग्वेदादिभाष्य–भूमिका, आर्याभिविनय, संस्कारविधि आदि अनेक ग्रन्थ लिखे। महर्षि के हृदय में मातृभूमि का सर्वोपरि स्थान था और देश प्रेम की भावना उनमें कूटकूट कर भरी हुई थी। उन्होंने स्वदेश, स्वसाहित्य, स्वभाषा, स्वसंस्कृति और स्वधर्म के महत्त्व पर अत्यन्त बल दिया। उन्होने सत्य की खोज के लिए घर ही नहीं छोड़ा अपितु संसार का सुख भी त्याग दिया था। मानव समाज में वीरता, उच्च संस्कार व सर्वधर्म समभाव में वृद्धि उनके जीवन के मुख्य लक्ष्य थे। मृत्यु को भी उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर यह कहते हुए, ''ईश्वर तेरी यही इच्छा है, तेरी इच्छा पूर्ण हो'' प्राण त्याग दिया था। बोधोत्सव हमें कर्तव्य पालन के लिए प्रेरित करता है। हम यह ऋषि–बोधांक महर्षि को कोटिशः नमन करते हुए सुधी पाठकों को समर्पित करते हैं।

डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

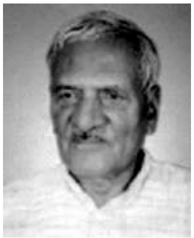

वेदामृत

ओ३म् तत् सत् परब्रह्मणे नमः।।
ओ३म् शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्यर्य्यमा।
शं न इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो विष्णुरुरुकमः।।

ऋग्वेद का 1/6/18/9

मन्त्र का पदार्थ (पं. सुदर्शनदेव आचार्य कृत) : (शम्) सत्यसुखदायक (नः) हमको (मित्रः) मंगल–प्रदेश्वर/सर्वथा सबका निश्चित् मित्र (शम्) परमसुखदायक (वरुण) सर्वोत्कृष्ट, स्वीकरणीय, वरेश्वर/सबसे परमोत्तम (शम्) न्याययुक्त सुख (नः) हमारे लिये (भवतु) हो (अर्यमा) पक्षपातरहित धर्मन्यायकारी/यमराज (शम्) परमैश्वर्ययुक्त स्थिर सुख (नः) हमको (इन्द्रः) परमैश्वर्यवान् इन्द्रेश्वर (बृहस्पतिः) महाविद्यावाचोऽधिपति, बृहस्पति परमात्मा/सबसे बड़े सुख का देने वाला (शम्) अनन्त सुख (नः) हमको (विष्णुः) सर्वव्यापक (उरुक्रमः) अनन्तपराक्रमेश्वर।।

''हे सच्चिदानन्दानन्तस्वरूप, हे नित्यशुद्धबुद्धमुक्तस्वभाव, हे अद्वितीयानुपमजगदादिकारण, हे अज, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारिन्, हे जगदीश, सर्वजगदुत्पादकाधार, हे सनातन, सर्वमंगलमय, सर्वस्वामिन्, हे करुणाकरास्मत्पितः, परम सहायक, हे सर्वानन्दप्रद, सकलदुःखविनाशक, हे अविद्यान्धकारनिर्मूलक, विद्यार्कप्रकाशक, हे परमैश्वर्यदायक, साम्राज्यप्रसारक, हे अधमोद्धारक, पतितपावन, मान्यप्रद, हे विश्वविनोदक, विनयविधिप्रद, हे विश्वासविलासक, हे निरंजन, नायक, शर्मद, नरेश, निर्विकार, हे सर्वान्तर्यामिन्, सदुपदेशक, मोक्षप्रद, हे सत्यगुणाकर, निर्मल, निरीह, निरमय, निरुपद्रव, दीनदयाकर, परमसुखदायक, हे दारिद्रयविनाशक, निर्वैरविधायक, सुनीतिवर्द्धक, हे प्रीतिसाधक, राज्यविधायक, शत्रुविनाशक, हे सर्वबलदायक, निर्बलपालक, हे सुधर्मसुप्रापक, हे अर्थसुसाधक, सुकामवर्द्धक, ज्ञानप्रद, हे सन्ततिपालक, धर्म्मसुशिक्षक, रोगविनाशक, हे पुरुषार्थप्रापक, दुर्गुणनाशक, सिद्धिप्रद, हे सज्जनसुखद, दुष्टसुताड़न, गर्वकुक्रोधलोभविदारक, हे परमेश, परेश, परमात्मन, परब्रह्मन, हे जगदानन्दक, परमेश्वर, व्यापक, सूक्ष्माच्छेद्य, हे अजरामृताभयनिर्बन्धनादे, हे अप्रतिमप्रभाव, निर्गुणातुल, विश्वाद्य, विश्ववन्द्य, विद्वद्विलासक, इत्याद्यनन्तविशेषणवाच्य, हे मंगलप्रदेश्वर! आप सर्वथा सब के निश्चित मित्र हो। हमको सत्यसुखदायक सर्वदा हो। हे सर्वोत्कृष्ट, स्वीकरणीय, वरेश्वर! आप वरुण अर्थात् सब से परमोत्तम हो, सो आप हमको परम सुखदायक हो। हे पक्षपातरहित, धर्मन्यायकारिन्! आप अर्य्यमा (यमराज) हो इससे हमारे लिये न्याययुक्त सुख देने वाले आप ही हो। हे परमैश्वर्यवन्, इन्द्रेश्वर! आप हम को परमैश्वर्ययुक्त शीघ्र स्थिर सुख दीजिये।

हे महाविद्यावाचोधिपते, बृहस्पते, परमात्मन्! हम लोगों को (बृहत्) सब से बड़े सुख को देने वाले आप ही हो। हे सर्वव्यापक, अनन्तपराक्रमेश्वर विष्णो! आप हमको अनन्त सुख दो। जो कुछ मांगेंगे सो आप से ही हम लोग मांगेंगे। सब सुखों को देने वाला आप के बिना कोई नहीं है। सर्वथा हम लोगों को आप का ही आश्रय है, अन्य किसी का नहीं, क्योंकि सर्वशक्तिमान् न्यायकारी दयामय सब से बड़े पिता को छोड़ के नीच (ईश्वर की तुलना में सभी नीचे हैं) का आश्रय हम लोग कभी न करेंगे। आप का तो स्वभाव ही है कि अंगीकृत को कभी नहीं छोड़ते सो आप सदैव हम को सुख देंगे, यह हमको दृढ़ निश्चय है।''

–ऋषि दयानन्द

(ऋषि दयानन्द के ग्रन्थ आर्याभिविनय से)

महर्षि दयानन्द सरस्वती के वेदाधारित सिद्धान्तों का भारत के संविधान पर प्रभाव

—डॉ० कृष्णकांत वैदिक शास्त्री

महर्षि के हृदय में मातृभूमि का सर्वोपरि स्थान था और देश प्रेम की भावना उनमें कूटकूट कर भरी हुई थी। वेद में मनुष्यों के लिए करने योग्य और न करने योग्य बातों का वर्णन, ईश्वर प्राप्ति के लिए स्तुति, प्रार्थना, उपासना और मनुष्य के कल्याण के लिए आवश्यक ज्ञान बीज रूप में दिया गया है, इसलिए इसके पालन में किसी को भी कोई शंका या कठिनाई नहीं होनी चाहिए। महर्षि ने सत्यार्थप्रकाश के छठे सम्मुलास में राजधर्म का प्रतिपादन किया है। यजुर्वेद के एक मंत्र की व्याख्या करते हुए कहा है कि राष्ट्रधर्म या राजधर्म उसे कहते हैं जिसमें राजन् सभाध्यक्ष सब प्रकार की शिक्षा प्राप्त कर विद्वानों को अपने साथ शासन के लिए सम्मिलित करते हुए, सेना की उचित रूप से सहायता लेते हुए और उनकी रक्षा करते हुए प्रजा का पालन करे। वर्तमान समय में एक कल्याणकारी राज्य में राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री से भी यही कार्य करने की अपेक्षाएं की जाती हैं। महर्षि ने विभिन्न वेद मंत्रों की व्याख्या करते हुए और अपने सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों में कहा है कि सब राज्याधिकार, सेनापतियों और सेना के बीच राज्याधिकार, दण्ड देने की व्यवस्था सम्बधी कार्यों का दायित्व आदि इन समस्त कार्यों का आधिपत्य वेदशास्त्रों में प्रवीण, पूर्ण विद्या वाले, धर्मात्मा, और जितेन्द्रिय होने चाहिए अर्थात् मुख्य सेनापति, मुख्य राज्याधिकारी, मुख्य न्यायाधीश, प्रधान और राजा ये सब विद्याओं में पूर्ण विद्वान् होने चाहिये। राजा और सभासदों को इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने वाला, अधर्म न करने वाला और योगाभ्यासी होना चाहिए। राजा को निरंकुश, तानाशाह और वंशानुगत नहीं होना चाहिए। वह प्रजा द्वारा चुना हुआ शासक ही होना चाहिए। महर्षि वेद के मन्त्रों की व्याख्या करते हुए कहते हैं कि राजा और प्रजा के सम्बन्ध रूपी व्यवहार में तीन सभायें अर्थात् विद्यार्यसभा, धर्मार्य सभा और राजार्यसभा नियत कर के समस्त प्रजा को स्वातंत्र्य, धर्म, सुशिक्षा और धनादि से अलंकृत करना चाहिए। एक व्यक्ति को राज्य का स्वतन्त्र अधिकार नहीं देना चाहिए अर्थात् राजा निरंकुश नहीं होना चाहिए उसे सभापति के अधीन होना चाहिए। सभापति के अधीन सभा, राजा और सभा प्रजा के अधीन, ये सभी प्रजा के अधीन और प्रजा राजसभा के अधीन रहे। अभी 26 नवम्बर, 2019 को हमने 70वाँ संविधान दिवस मनाया। हमारे संविधान के अन्तर्गत वर्तमान संसदीय प्रणाली और प्रजातन्त्र के चार स्तम्भों—कार्यपालिका, संसद, न्यायपालिका और प्रैस की व्यवस्था में राष्ट्रपति, प्रधान मन्त्री, सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश और प्रैस का स्वतन्त्र होते हुए भी एक—दूसरे पर नियंत्रण रहता है जिससे कोई भी संस्था निरंकुश रूप से शासन नहीं कर सकती है। वेद में तीन प्रकार के राज्य बताए गये हें—छोटे—छोटे मांडलिक राज्य जिसके प्रधान के लिए राजा और उसके पर्याय नृपति आदि शब्दों का प्रयोग किया गया है, इनके ऊपर बड़े राज्य बताये गये हैं। इन सबसे ऊपर चक्रवर्ती राज्य का वर्णन महर्षि द्वारा अपने ग्रन्थों में अनेक स्थानों पर किया गया है। ऐसा राजा होने पर राष्ट्रों के आपस के झगड़े मिट सकते हैं। वेदों में वर्णित राज्य व्यवस्था में देश की रक्षा के लिए शक्तिशाली सेना रखने की बात कही गई है।

देश में कृषि उत्पादन, व्यवसाय, नहरों, सड़कों के निर्माण आदि वर्तमान समय की सभी आवश्यकताओं और सुविधाओं के लिए व्यवस्था की बात कही गई है। यह भी स्पष्ट रूप से कहा गया है कि सत्य, न्याय, परोपकार, सहिष्णुता, तप और संयम आदि धर्म के सार्वभौम सिद्धान्त हैं। भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त होने के बाद महर्षि द्वारा वेदों के की ज्ञान गंगा से निकाले गये इन मोती रूपी बिन्दुओं पर सरकार द्वारा विचार करने के उपरान्त भारत को कल्याणकारी राज्य बनाने के लिए बहुत प्रयास किये जा चुके हैं और अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है।

वेद की मातृभमि वन्दना, स्वराज्य की अर्चना के ऋग्वेदीय सूक्त, मनु, याज्ञवल्क्य, शुक्र, चाणक्य और विदुर के राजनीतिशास्त्र और सामाजिक व्यवस्थाओं के सूत्र महर्षि के लिए प्रेरणा के स्रोत थे। महर्षि उन्हीं विचारों और सिद्धान्तों के प्रतिपादक थे जो वेद सम्मत हों। देश में पन्थनिरपेक्ष शासन की स्थापना केवल वैदिक शिक्षा के माध्यम से ही सम्भव है। वह ऐसे भव्य भारत के निर्माण की योजना रखते थे, जिसमें सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों मे विश्व के समस्त देशों का वह मार्गदर्शन कर सके। वह भारत को पुनः विश्व गुरु के रूप में प्रतिष्ठित हुआ देखना चाहते थे। महर्षि ने आर्यजागरण का कार्य आरम्भ किया था। 'कृण्वन्तो—विश्वमार्यम्' की भावना को वह अपने इसी चिन्तन के आधार पर क्रियान्वित होता हुआ देखना चाहते थे। उन्होंने विश्व जागरण से पहले आर्यजागरण करना चाहा था। आर्यजागरण का अभिप्राय था— संसार की सज्जन शक्ति का संगठन करना। विश्व का एक समाज बना कर सारे विश्व को प्रकाश से आलोकित कर देना। उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज का यही उद्देश्य था।

महर्षि दयानन्द सरस्वती के चिन्तन का भारतीय संविधान पर स्पष्ट प्रभाव दिखता है। स्वतंत्र भारत के लिए 1946 के चुनावों के बाद संविधान निर्मात्री सभा का निर्माण हुआ। भारत की इस संविधान सभा ने यद्यपि विदेशी संविधानों व अंग्रेज सरकार द्वारा जारी अधिनियमों का सहारा लिया, परन्तु फिर भी यह नहीं कहा जा सकता है कि उन्होंने सब कुछ उधार ही लिया था। उनके द्वारा अपना जो योगदान दिया गया था, उसमें महर्षि दयानन्द सरस्वती और आर्यसमाज का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। राष्ट्रीयता के सन्दर्भ में यदि हम विचार करें तो आर्यसमाज का प्रभाव बहुत ही स्पष्ट दिखता है। यदि 'हम भारत के लोग' शब्दों को हम थोड़ी देर के लिए 'हम आर्यावर्त्त के आर्यजन' मान लें तो इसका अर्थ होगा कि हम एक जागृत और सुदृढ़ राष्ट्र(आर्यावर्त्त) के सभी जागृत और राष्ट्रचिन्तक जन हैं। हमारे संविधान निर्माताओं पर आर्यसमाज के चिन्तन का प्रभाव इससे भी सिद्ध होता है कि आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द ने जो सोचा था कि राजा के अधीन सभा, सभा के अधीन राजा, राजा और सभा प्रजा के अधीन और प्रजा राजसभा के अधीन हो। इस से प्रमाणित हो जाता है कि अन्तिम शक्ति प्रजा में समाहित है, क्योंकि संविधान की निर्माता जनता है। विधायिका अपना विधान बनाकर इस प्रजा पर लागू करेगी तो उस समय स्पष्ट हो जायेगा कि प्रजा सभा के अधीन है। इस सभा के निर्णय को क्योंकि प्रधानमंत्री (राजा) लागू करायेगा तो उसकी स्थिति भी स्पष्ट हो जायेगी कि वह भी सभा के ही अधीन है।

महर्षि दयानन्द के सिद्धान्तों के आधार पर संविधान के समस्त बिन्दुओं को स्थानाभाव के कारण इस लेख में समाहित करना सम्भव नहीं है। अतः कुछ मुख्य बिन्दुओं पर ही यहां पर चर्चा की जा रही है:—

नागरिकों के मूल कर्त्तव्य— संविधान के अनुसार नागरिकों के मूल कर्त्तव्य निम्न प्रकार है— 1— नागरिकों का मूल कर्त्तव्य है कि वे संविधान की धाराओं का पालन करें। संविधान के

आदर्शों, संस्थाओं को उचित सम्मान दें तथा राष्ट्रगान और राष्ट्रध्वज का आदर करें। 2– राष्ट्रीय आन्दोलन को प्रेरित करने वाले उच्चादर्शों को हृदयंगम करना तथा उनका अनुकरण करना। 3– भारत की सम्प्रभुता, एकता और अखण्डता की रक्षा करना हर नागरिक का एक परम कर्त्तव्य है। 4– नागरिकों का कर्त्तव्य है कि देश की रक्षा के लिए तैयार रहें तथा जब कभी उन्हें राष्ट्र सेवा के लिए बुलाया जाए तो उस समय अपनी सेवा उपलब्ध करायें। 5– वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानवतावाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करना। 6– सार्वजनिक सम्पत्ति को सुरक्षित करना तथा हिंसा का त्याग करना। 7– भारत के सभी भागों में समरसता और भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करना तथा स्त्रियों के लिए उनके सम्मान की विरोधी प्रथाओं का परित्याग करना। 8– देश की मिली जुली संस्कृति व गौरव को बनाए रखना हर नागरिक का मूल कर्त्तव्य है। 9– पर्यावरण को दूषित होने से बचाया जाये तथा प्राकृतिक पदार्थों–जंगल, झील, नदी व जंगली जीवों की रक्षा करें तथा जीवधारियों के प्रति दयाभाव रखना चाहिए। 10– सभी वैयक्तिक एवम् सामूहिक कार्यों में श्रेष्ठता लाने के लिए सदा प्रयत्न करना, जिससे राष्ट्र प्रत्येक क्षेत्र में नई–नई उपलब्धियाँ प्राप्त कर सकेगा।

आर्यसमाज के दस नियमों में कमोबेश उपरोक्त कर्त्तव्यों का ही वर्णन किया गया है, जिससे महर्षि दयानन्द की दूरदर्शिता और वेद के प्रति निष्ठा का प्रमाण मिलता है। उक्त मूल कर्त्तव्यों का ज्ञान हमें वेद के संगठन सूक्तों से भी मिलता है।

महर्षि दयानन्द सामाजिक समता के परम पोषक थे। उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है– ''परमात्मा सब के मन में सत्य का ऐसा अंकुर डाले कि जिससे मिथ्या मत शीघ्र ही प्रलय को प्राप्त हों। इसमें सब विद्वान् लोग विचारकर विरोध भाव छोड़ के अविरुद्ध मत के स्वीकार से सब जने मिलकर सबके आनन्द को बढ़ावें। (स० प्र०स०–10)

स्वतंत्रता का अधिकार– संविधान के अनुच्छेद 19 में नागरिकों को सात प्रकार की स्वतंत्रता प्रदान की गई है। अब 44वें संवैधानिक संशोधन के अन्तर्गत सम्पत्ति के अधिकार को निकाल कर छः कर दिया गया है। ये अधिकार निम्न प्रकार हैं–

1– भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता।

2– शान्तिपूर्ण ढंग से बिना हथियारों के सभा सम्मेलन करने की स्वतंत्रता।

3– संघ या संस्था बनाने की स्वतंत्रता।

4– देश के भीतर घूमने फिरने की स्वतंत्रता।

5– देश के किसी भी भाग में निवास करने और बसने की स्वतंत्रता।

6– कोई भी व्यवसाय या धन्धा करने की स्वतंत्रता।

ये सब स्वतंत्रतायें वेद के स्वराज्य की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करती हैं। वेद ने जिस स्वराज्य का उद्‌बोधन कर उन्नत मानव समाज की कल्पना की है, उस मानव समाज के लिए इस प्रकार के अधिकारों की अत्यंत आवश्यकता है। अथर्ववेद (20/109/03) में कहा गया है–

नमसा सहः सपर्यन्ति प्रचेतसः। अर्थात् विद्वान् स्वराज्य रूपी शक्ति की नमस्कार के साथ पूजा करते हैं। यहाँ नमस्कार का अर्थ दूसरों की स्वतंत्रता का सम्मान करना भी है। जब हम दूसरों की स्वतंत्रता का या मौलिक अधिकारों का हृदय से सम्मान करते हैं, तभी हमारे अपने मौलिक अधिकारों की सुरक्षा हो पाना सम्भव है।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि महर्षि दयानन्द सरस्वती के वेदाधारित सिद्धान्तों का भारत के संविधान पर प्रभाव स्पष्ट रूप से प्रमाणित होता है।

हमने ऋषि दयानन्द के उपकारों से उऋण होने का प्रयत्न किया है

—मनमोहन कुमार आर्य

मनुष्य की आत्मा अनादि, नित्य, अजर, अमर, सूक्ष्म, ससीम, जन्म—मरणधर्मा, कर्म के बन्धनो में बंधी हुई, वेद ज्ञान प्राप्त कर उसके अनुसार कर्म करते हुए मोक्ष को प्राप्त होने वाली एक चेतन सत्ता है। चेतन सत्ता में ज्ञान एवं प्रयत्न गुण होता है। जीवात्मा एकदेशी होने से अल्पज्ञ होता है। इसको सुख व मोक्ष प्राप्ति के लिए ज्ञान की आवश्यकता होती है। ज्ञान प्राप्ति के मुख्य साधन तो माता, पिता व आचार्य होते हैं। इसके साथ ही मनुष्य स्वाध्याय द्वारा धर्म—अधर्म तथा कर्तव्य व अकर्तव्य सहित अनेक विषयों का ज्ञान प्राप्त कर सकता है। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश सहित अनेक ग्रन्थों की रचना की है। इन ग्रन्थों में वेद वा वैदिक मान्यताओं का प्रकाश है। ईश्वर का सत्यस्वरूप तथा उपासना क्यों, किसकी व कैसे करनी चाहिये, इसका बोध भी ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों से होता है। अतः वेद, दर्शन, उपनिषद, मनुस्मृति, रामायण, महाभारत तथा ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों के अध्ययन सहित अन्यान्य वैदिक विद्वानों के ग्रन्थों का अध्ययन से मनुष्य अपने ज्ञान में वृद्धि कर निःशंक वा निर्भ्रान्त हो सकता है। ऐसा करना इस लिये आवश्यक है कि उसे अपने धर्म व कर्तव्य का बोध हो सके और वह अज्ञानी, चतुर, चालाक व स्वार्थी लोगों से धर्म पालन विषय में ठगे जाने से बच सके। उसका जीवन सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग का एक उदाहरण बन जाये और वह धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष के मार्ग पर चलता हुआ अपनी आत्मा की उन्नति करने सहित जन्म—जन्मान्तरों में कल्याण को प्राप्त हो सके।

स्वाध्याय शब्द 'स्व' अर्थात स्वयं का अध्ययन करने को कहते हैं। स्व अर्थात् अपनी आत्मा और शरीर का ज्ञान जो हमें माता—पिता तथा आचार्य दे सकते हैं। वर्तमान में सभी माता—पिता व आचार्य इतने ज्ञानी नहीं है कि वह अपनी सन्तानों व शिष्यों की इस आवश्यकता की पूर्ति कर सकें। इसके लिये आर्यसमाज का सदस्य बनकर और वहां रविवार को होने वाले सत्संग, वार्षिकोत्सव तथा आर्यसमाजों की सभाओं व संस्थाओं सहित गुरुकुलों में होने वाले उत्सवों में भाग लेकर वहां विद्वानों के उपदेशों को सुनकर तथा विद्वानों से शंका—समाधान करके ईश्वर, आत्मा व धर्म—अधर्म, उपासना, अग्निहोत्र यज्ञ तथा सामाजिक नियमों आदि सभी प्रकार का ज्ञान ग्रहण किया जा सकता है। कुछ विषय जटिल होते हैं जिसके लिये हमें उन विषयों के ग्रन्थों को पढ़ कर समझना होता है। स्वाध्याय में हम वेदों सहित योग्य विद्वानों के ग्रन्थों का अध्ययन कर विद्वान बन सकते हैं और निर्भ्रान्त होकर अपने अन्य बन्धुओं में भी ज्ञान का प्रचार व प्रसार कर सकते हैं। आर्यसमाज के सक्रिय एवं स्वाध्यायशील सदस्यों का धर्म अधर्म तथा कर्तव्य—अकर्तव्य सहित धार्मिक एवं सामाजिक विषयों का ज्ञान अन्य समानधर्मी संस्थाओं से अधिक होता है। इसका कारण यह है कि

आर्यसमाज में प्रत्येक सप्ताह विद्वानों के प्रवचनों सुनने को मिलते है और निजी जीवन में वेदादि अनेक ग्रन्थों का नियमित स्वाध्याय किया जाता है। अन्य मतों व संस्थाओं में अपने ही धर्म गुरुओं की पुस्तकों का अध्ययन कराया जाता है। उन ग्रन्थों में लिखी बातों की सत्यासत्य की परीक्षा नहीं की जाती। उनमें जो सत्य व असत्य लिखा है, उसे ही स्मरण करना व मानना होता है। शंका–समाधान को वहां बुरा माना जाता है। इस कारण अन्य मतों के अनुयायी अनेक प्रकार के अज्ञान, अन्धविश्वासों व पाखण्डों से युक्त होते हैं। आर्यसमाज का नियम ही है कि सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये। अतः आर्यसमाज में मनुष्य को सत्य का ज्ञान प्राप्त करने की सबसे अधिक सुविधा है। ईश्वर का सच्चा व तर्कसंगत स्वरूप केवल वेदों के विद्वान व उनके अनुयायी, आर्यसमाज के अनुयायी ही जानते, मानते व उसका प्रचार करते हैं। वेद वर्णित अग्निहोत्र–यज्ञ को भी आर्यसमाज के विद्वानों ने ही तर्क और युक्ति की कसौटी पर कसकर अपनाया है व इसका प्रचार भी वह करते हैं। यज्ञ करने वाले मनुष्य को उसके लाभों का स्वयं अनुभव करने व जानने का अवसर मिलता है और वह यज्ञ करके सन्तुष्ट व प्रसन्न देखे गये हैं।

स्वाध्याय से मनुष्य अज्ञान से मुक्त होता है व ज्ञानी बनता है। अज्ञान दूर होने से मनुष्य दुराचार की हानियों को जानकर उनसे भी पृथक होता है। वह सदाचार को अपना साध्य मानकर उसके अनुरूप आचरण करता है। वेद व वैदिक ग्रन्थों के स्वाध्याय से मनुष्य ईश्वर, माता–पिता, आचार्यों सहित देश व समाज का भक्त व हितकारी बनता है। स्वाध्याय मनुष्य को सच्चे ईश्वर का उपासक भी बनाता है। स्वाध्याय करने वाला अपने सभी मित्रों, सम्बन्धियों तथा सामजिक बन्धुओं के प्रति अपने कर्तव्यों को जानकर उनसे सत्य का व्यवहार करता है। इससे समाज में अन्धविश्वास एवं पाखण्ड दूर होने के साथ समाज में किसी प्रकार का भेदभाव व मिथ्या परम्परायें उत्पन्न नहीं होती तथा जो अन्ध–परम्परायें अस्तित्व में होती हैं वह स्वाध्याय से अर्जित ज्ञान व आत्म–चिन्तन की प्रक्रिया से दूर हो जाती हैं। स्वाध्यायशील मनुष्य समाज के सभी लोगों का उनकी सभी समस्याओं के निवारण में मार्गदर्शन कर सकता है। मनुष्य अपने स्वास्थ्य और व्यवसाय की समस्याओं को किस प्रकार से हल कर सकता है, स्वाध्यायशील व्यक्ति इसका भी सुझाव अपने साथियों को दे सकता है। ज्ञान एवं पुरुषार्थ से युक्त मनुष्य कोई भी कार्य करेगा तो उसमें उसको निश्चित रूप से सफलता मिलेगी। अतः स्वाध्याय से अनेक लाभ मनुष्य प्राप्त कर सकता है। जीवन भर स्वाध्याय से जुड़े रहना चाहिये। सभी मनुष्यों को एक निश्चित समय प्रतिदिन, दो–तीन घण्टे या अधिक, स्वाध्याय में लगाने चाहिये। इसके शुभ परिणाम शीघ्र सामने आते हैं।

स्वाध्याय क्यों करना चाहिये? स्वाध्याय अज्ञान को दूर करने तथा ज्ञान की प्राप्ति के लिये किया जाता है। स्वाध्याय आत्म–चिन्तन को भी कहते हैं। स्वाध्याय और सन्ध्या में परस्पर समानता है। स्वाध्याय में हम अनेक विषयों का प्रामाणिक अध्ययन पुस्तकों तथा आत्म–चिन्तन व मनन के द्वारा करते हैं। सन्ध्या ईश्वर के ध्यान व चिन्तन–मनन को कहते हैं। स्वामी दयानन्द जी ने सन्ध्या की विधि की पुस्तक भी लिखी हैं। इसमें हमें आत्मा और परमात्मा विषयों का वेदादि ग्रन्थों के स्वाध्याय सहित विद्वानों के प्रवचनों व उनसे वार्तालाप से

ज्ञान प्राप्त होता है। इसके अनुरूप ईश्वर के मुख्य नाम ओ३म् तथा गायत्री मन्त्र का जप करते हुए ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना से सम्बन्धित वेदमन्त्रों के अर्थों पर विचार करते हुए ईश्वर के स्वरूप में प्रविष्ट व उसमें स्थिर होने का प्रयास करते हैं। ऐसा करने से आत्मा पर पड़े अज्ञानरूपी मल, विक्षेप व आवरण कटते हैं और आत्मा में ज्ञान का प्रकाश उत्पन्न होता है। अभ्यास करते हुए ईश्वर के ध्यान में अपने मन को स्थिर रखने का प्रयत्न करते हुए मन की एकाग्रता की स्थिति के अनुरूप लाभ होता है। ऐसा करने से ईश्वर का प्रत्यक्ष हो सकता है। वेद में उपासक ईश्वर की स्तुति व प्रार्थना करते हुए कहता है कि वह महानतम पुरुष ईश्वर को जानता है। वह ईश्वर सूर्य के समान प्रकाशमान है तथा अन्धकार से सर्वथा पृथक व दूर है। उस ईश्वर को जानकर ही हम अपनी मृत्यु से पार मोक्ष सुख को प्राप्त कर सकते हैं। अतः स्वाध्याय से प्राप्त ज्ञान के क्रियात्मक रूप को सन्ध्या कह सकते हैं। स्वाध्याय से हमें जो ज्ञान प्राप्त होता है उसके अनुसार जीवन व्यतीत करना होता है। इस ज्ञान के क्रियात्मक उपयोग वा आचरण को ही सामाजिक नियमों का पालन कहा जाता है। ऐसा करने से मनुष्य की सामाजिक उन्नति होती है।

स्वाध्याय के महत्व व लाभ का उदाहरण देना हो तो हम आर्यसमाज के एक सदस्य के रूप में दे सकते हैं। एक व्यक्ति आर्यसमाज जाता है। वहां वह सन्ध्या एवं अग्निहोत्र यज्ञ करता है। भजन सुनता, सामूहिक प्रार्थना सुनता व करता है तथा विद्वानों के प्रवचनों को सुनकर उन पर चिन्तन व मनन करता है। इसके साथ ही वह वहां से सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों को लेकर उनका अध्ययन करता है। सत्यार्थप्रकाश के अध्ययन से उसका अज्ञान दूर हो जाता है। उसके बाद वह उपनिषद, दर्शन, वेद, मनुस्मृति, रामायण, महाभारत आदि ग्रन्थों सहित आर्य विद्वानों के विविध विषयों के ग्रन्थों का अध्ययन करता है। ऐसा करने से उसकी अविद्या दूर हो जाती है। वह ऐसा करके एक अच्छा वक्ता व लेखक भी बन सकता है। यज्ञों व संस्कारों को कराने वाला पुरोहित भी बन जाता है। वर्तमान में वेद, उपनिषद, दर्शन, मनुस्मृति, रामायण, महाभारत आदि सभी ग्रन्थ हिन्दी में अनुदित व टीकाओं सहित मिलते हैं। अतः हिन्दी भाषी लोगों को शास्त्र ज्ञान प्राप्त करने में सबसे अधिक सुविधा है। ऋषि दयानन्द ने ही शास्त्रीय ग्रन्थों का हिन्दी में अनुवाद व भाष्य करने की परम्परा को जन्म दिया है। स्वाध्याय कर मनुष्य धर्म, अर्थ व काम आदि साधनों से मोक्ष की प्राप्ति की पात्रता को प्राप्त कर उसके निकट पहुंच सकता है। यही जीवन का लक्ष्य भी है जिसे मनुष्य मुख्यतः स्वाध्याय से प्राप्त कर सकता है। जीवन के अन्य सभी क्षेत्रों में भी स्वाध्याय से लाभ होता है। अतः हमें स्वाध्याय करने में कभी भी प्रमाद नहीं करना चाहिये। ऋषि दयानन्द ने बताया है कि ज्ञान की प्राप्ति होने पर मनुष्य को असीम सुख की प्राप्ति होती है। ज्ञान से प्राप्त सुख की तुलना हम अन्य साधनों से प्राप्त सुखों से नहीं कर सकते। हम जो स्वादिष्ट पदार्थों का भोग करते हैं, उससे रोग का भय होता है। अनुचित कार्यों से धन कमायेंगे तो सरकारी दण्ड का भय होता है। सच्चाई से भी धन कमाते हैं तो चोरों का भय होता है परन्तु ज्ञान कितना भी अर्जित कर लें, उसे हमने कोई छीन नहीं सकता। ज्ञान को तो शिष्य बन कर ही प्राप्त किया जा सकता है जिससे गुरु व शिष्य दोनों का कल्याण होता है। अतः स्वाध्याय के द्वारा ज्ञान प्राप्ति का प्रयास सभी स्त्री व पुरुषों को करना चाहिये। इससे स्वाध्याय करने वालों का सर्वविध कल्याण होना सम्भव है।

स्वामी दयानन्द का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य मूर्तिपूजा का खंडन

—लाला लाजपत राय

स्वामी दयानन्द जी अभी बालक थे, जब उनको यह बोध हुआ कि मूर्तिपूजा ईश्वर उपासना का सच्चा मार्ग नहीं, वरन बहुत बुरा और भ्रष्टाचार है। यह विचार दृढ़ता से उनके हृदय में जम गया और सारी आयु उनके हृदय से यह विचार कम न हुआ। बालकपन में ही अपने माता–पिता के सामने मूर्तिपूजा का निषेध किया और अपने पिता के बड़े क्रोध करने पर भी जो एक बालक के लिये अतीव भयजनक होता है, उन्होंने उस अपने विश्वास को छिपा न रखा। ब्रह्मचर्य और उसके पीछे सन्यास अवस्था में भी कभी अपने विश्वास को नहीं छिपाया। न किसी मंडली से डरा और न किसी मंडली वाले से। न किसी राजा से डरा और न किसी पंडित से। जब तक जीते रहे अपनी सिंह ध्वनि को मूर्तिपूजा के खंडन में गर्जाते रहे। संसार को मूर्तिपूजा से हटाकर निराकार ईश्वर की उपासना की ओर प्रेरणा करना उनके जीवन का बड़ा उद्देश्य था और प्रत्येक मनुष्य को विदित है कि किस दिलेरी और हिम्मत से उन्होंने उस प्रकाश को बुझने नहीं दिया जो उनको बाल्यावस्था में हुआ था।

ऋषिभक्त एवं आजादी के आन्दोलन के एक शीर्ष नेता लाला लाजपत राय जी ने सन् 1898 में ऋषि दयानन्द जी की उर्दू भाषा में एक जीवनी लिखी थी। इसका हिन्दी अनुवाद सन् 1967 में दिल्ली से प्रकाशित सार्वदेशिक साप्ताहिक पत्र में छपा था। इस हिन्दी जीवनी का शीर्षक था 'महर्षि दयानन्द सरस्वती और उनका काम'। लाला जी के अनुसार ऋषि दयानन्द ने चार मुख्य काम किये। 1—मूर्तिपूजा का खंडन, 2— ब्राह्मण वाद से मुक्ति, 3— वेदों का भाष्य और 4— आर्य समाज की स्थापना। लाला जी के अनुसार इन चारों कार्यों में मुख्य कार्य था मूर्तिपूजा का खंडन। इस लेख में लाला जी का मूर्तिपूजा के खंडन विषयक प्रसंग प्रस्तुत है।

हर एक हिन्दू जानता है कि जैसे स्वामी दयानन्द मूर्तिपूजा का बड़ा शत्रु था, उपनिषदों के जमाने के पीछे भारतवर्ष में ऐसा साहसी, निर्भय, कठोर और प्रत्यक्ष शत्रु मूर्तिपूजा का कोई नहीं पैदा हुआ। सारी दुनिया क्या ईसाई, क्या मुसलमान, क्या पौराणिक, क्या वेदान्ती और क्या बौद्ध सब इस बात को जानते हैं कि मूर्तिपूजा उन विषयों में था जिनके मानने का विचार उनके हृदय में कभी पैदा नहीं हुआ था मूर्तिपूजा के खंडन में उनके सजातीय, एक भाषा वाले और एक धर्म वाले मनुष्यों, साधारण मनुष्यों ने ही नहीं परन्तु विद्वानों ने भी, उसे 'नास्तिक' कहा है। किसी ने उन्हें पादरियों का वैतनिक सेवक कहा, किसी ने धर्म का शत्रु बतलाया। परन्तु इस पुरुष सिंह ने किसी एक की भी परवाह नहीं की। कई बार उसके सजातीय पंडितों ने छिपकर और कई बार प्रकट होकर रुदन करके उनसे यह प्रार्थना की कि वह मूर्तिपूजा का खंडन छोड़ दें, तो वह उसको अवतार बनाकर पूजने को तैयार हैं। परन्तु उस महापुरुष के हृदय में न उनके रोने–पीटने का और न उनकी रिश्वत का असर हुआ। वह एक दृढ़ आसन पर बैठा था जिससे उसको कोई हिला नहीं सकता था। बहुत से

ठाकुरों, राजा, महाराजाओं ने पौशीदा और प्रकट होकर यह सम्मति दी कि वह मूर्तिपूजा का खंडन छोड़ दें। उसको अनेक प्रकार का लोभ दिया गया, कभी–कभी धमकियां भी दी गईं। प्राणों का भय, बदनामी का डर और धिक्कारों की बुझाड़ क्रमशः उनके सामने आये परन्तु उसके दृढ़ हृदय पर कुछ भी असर न कर सके। मूर्तिपूजा को जिस रीति, जिस स्थान और जिस दशा में देखा वहीं उसका बड़ी निडरता से खंडन कर दिया। यह विषय उसके हृदय में पाषाण रेखा के समान अंकित था जिसे कोई वस्तु मिटा नहीं सकती थी। यह एक ऐसा विषय था जिस पर वह सारे संसार की परवाह नहीं करता था। काशी के 300 पंडित, कलकत्ते के विद्वान् और दुनिया के दार्शनिक कोई उसको इस आसन से नहीं हिला सके। महाराजा जयपुर, महाराणा उदयपुर, महाराजा जोधपुर, महाराजा इन्दौर और महाराजा काशी सबके प्रयत्न व्यर्थ हुए। मुसलमान और ईसाई प्रकट रीति से मूर्तिपूजा के शत्रु हैं परन्तु उनमें भी जितना अंश उसने मूर्तिपूजा का देखा उसका बड़े साहस से खंडन किया।

स्वामी दयानन्द का विश्वास था कि केवल बुद्धि के अनुसार ही मूर्तिपूजा भ्रष्टाचार (मिथ्याचार) नहीं है, वरंच वेदों में भी उसकी मनाही है और ईश्वरीय ज्ञान के भी विरुद्ध है। स्वामी जी का यह दृढ़ विश्वास था कि मूर्तिपूजा समस्त धर्म और शिष्टाचार सम्बन्धी बुराईयों की माता है और पुलीटीकल दासभाव और अप्रतिष्ठा उसका आवश्यक फल है। वह समझता था कि हिन्दुवंश कभी धर्म के सत्पथ पर नहीं चल सकता ओर न सोशिअल या पुलीटीकल उन्नति कर सकता है जब तक कि वह मूर्तिपूजा को न छोड़ दे। इसलिये अपनी आत्मा का समस्त बल उसने मूर्तिपूजा के खंडन में व उसको वेद विरुद्ध और बुद्धि के विरुद्ध करने मे लगा दिया।

कौन नहीं जानता उसने बड़े–बड़े बुतपरस्तों और बड़े–बड़े मूर्तिपूजा के भक्तों के दिलों को हिला दिया। उसने हिन्दू जाति के स्थिर हुए जल को चलायमान कर दिया और हिन्दू पंडितों को इस खोज में डाल दिया कि मूर्तिपूजा के मंडन के प्रमाण ढूंढ़े क्योंकि स्वामी जी वेदों को पूर्णरूप में मानने वाले थे। यदि वेदों में मूर्तिपूजा का प्रमाण मिल जाता तो उसको पूर्ण उत्तर मिल जाता।

सत्य तो यह है कि मूर्तिपूजा और देवपूजन के खंडन में स्वामी दयानन्द ने वह काम किया कि जिसमें स्वामी शंकराचार्य जैसे महात्मा भी घबरा गए और अशक्त रहे। मूर्तिपूजा को वेद विरुद्ध सिद्ध करने से स्वामी दयानन्द ने हिन्दू धर्म के शत्रुओं और अन्य मजहब वालों से उनका और उससे दृढ़ भयानक शस्त्र जिससे वह हिन्दू धर्म को चकनाचूर कर देते थे, छीन लिया। मुसलमान और ईसाइयों को सबसे बड़ी शंका जो वेदों के धर्म से विरुद्ध थी, स्वामी दयानन्द की शिक्षा से छिन्न–भिन्न हो गई। मुसलमान और ईसाइयों की अब यह शक्ति न रही कि हिन्दू धर्म को मूर्तिपूजा का धर्म बतलाकर हिन्दुओं को बहका सकें और अपने सम्प्रदाय में मिला सकें। मानो कि ईसाई और मुसलमानों के हमलों का सारा बल टूट गया। मूर्तिपूजा के दृढ़ दुर्ग को वास्तव में शुद्ध ईश्वर पूजा का विरोधी सिद्ध करके स्वामी दयानन्द ने मुसलमान और ईसाइयों के दावों को निर्मूल (निर्बल) बना दिया। लाखों जीवों (आर्य–हिन्दुओं) को अपने धर्म से पतित होने से बचा लिया। यदि स्वामी दयानन्द जी अपने जीवन में और कुछ भी न करते और केवल इतना ही (मूर्तिपूजा को वेद विरुद्ध सिद्ध) कर जाते तो भी हम समझते हैं कि केवल इस काम से वह महापुरुष कहलाने के योग्य होते। परन्तु स्वामी दयानन्द ने और भी महान कार्य किये हैं जिनका वर्णन हम आगे (ऋषि दयानन्द की जीवनी में) करेंगे। तो भी हमारे यह कहने में कुछ भी शंका नही कि मूर्तिपूजा का खंडन स्वामी दयानन्द के जीवन का मुख्य उद्देश्य था।

प्रस्तुतकर्ताः **मनमोहन कुमार आर्य**

रावण की सभा में हनुमान

—ईश्वरी प्रसाद प्रेम जी

अध्यात्म रामायण में लिखा है कि इसके बाद हनुमान जी रावण की सभा में लाये गये, वहाँ पहुँचकर उन्होंने समस्त सभा के बीच में बड़े सज—धज के साथ राजसिंहासन पर बैठे हुए रावण को देखा। हनुमान् जी को देखकर रावण को मन ही मन बड़ी चिन्ता हुई। वह सोचने लगा कि यह भयंकर वानर कौन है? बहुत सी तर्कणा करने के बाद रावण ने प्रहस्त से कहा—

प्रहस्त पृच्छैनमसौ किमागतः
किमत्र कार्य कुत एव वानरः।
वनं किमर्थ सकल विनशितं
हताः किमर्थ मम मम राक्षसा बालत्।।
(५।४।५)

प्रहस्त! इस वानर से पूछो, यह यहाँ क्यों आया है? यहाँ इसका क्या काम है? यह आया कहाँ से है? तथा इसने मेरा समस्त बगीचा क्यों नष्ट कर डाला? और मेरे राक्षस वीरों को बलात्कार से क्यों मार डाला?

रावण्स्य वचः श्रुत्वा प्रहस्तो वाक्यमब्रवीत्।
समाश्वसिहि भद्रं ते न भीः नार्यात्वाया कपे! ५०।७

यदि तावत्वमिन्द्रेण प्रेषितो रावणालयम्।
तत्वमाख्याहि मा ते भूद्भयं वानर! मोक्ष्यसे।५०।८

यदि वैश्रवणस्य त्वं यमस्य वरुणस्य च।
चारु रूपमिदं कृत्वा प्रविष्टो नः पुरीमिमाम्।५०।६

विष्णुना प्रेषितो वापि दूतो विजयकांक्षिणा।
न हि ते वानरं तेजो रूपमात्रन्तु वानरम्।५०।१०

तत्वतः कथयस्वाद्य ततो वानर मोक्ष्यसे।
अनृतं वदतश्चापि दुर्लभं तव जीवितम्।५०।११

रावण की आज्ञा से प्रहस्त बोला, कि—

''हे वानर! विश्वास रख कि तुझे किसी प्रकार का भय न होगा। सच कह कि क्या तुझे रावण की पुरी में इन्द्र ने भेजा है अथवा तू कुबेर, यम, वरूण का दूत है, जो लंका में आया, या तुझे जय की कामना वाले विष्णु ने भेजा है? सच—सच कह, तब तुझे छोड़ दिया जाएगा। यदि तूने झूठ बोला, तो तेरा जीवन ही दुर्लभ है। किसलिये तेरा यहाँ आना हुआ है, सो बता?

मन्त्री का वचन सुनकर हनुमान बोले ''न मैं इन्द्र, यम, वरूण का दूत हूँ न कुबेर से मेरी मैत्री है। न मैं विष्णु का भेजा हुआ हूँ, मेरी जाति वानर ही है। मैं राक्षसेन्द्र के दर्शन के लिये आया हूँ, क्योंकि मेरे लिए यह दुर्लभ था। उपवन—विनाश भी मैंने राक्षसराज के दर्शन के निमित्त ही किया है। वहाँ युद्ध की इच्छा से बड़े—बड़े बलाभिमानी राक्षस पहुँच गए तब अपनी रक्षा के लिये मैंने युद्ध किया—

रक्षणार्थ तु देहस्य प्रतियुद्धा मया रणे।५०।१५
''मैं पवनपुत्र और महातेजस्वी राम का दूत हूँ।

''पवन पुत्र''— इतना सुनते ही रावण ने ऊपर से नीचे तक ध्यानपूर्वक देखा और आश्चर्य तथा विस्मय की मुद्रा में कहा—''तो तुम रत्नपुर के राजा वीरता और शौर्य के भण्डार वानर श्रेष्ठ पवन कुमार के यशस्वी पुत्र महावीर हनुमान हो! तुम तो हमारे मित्र वर्ग में से हो, तुम्हारे ही पौरुष पूर्ण सहयोग से तो हमने देवराज कुबेर को विजय कर उससे पुष्पक विमान छीन लिया था। तुम तो हमारे पुत्र ही नहीं पौत्र तुल्य हो, फिर तुम यहाँ इस रूप में कैसे?''

हनुमान जी ने तब सविस्तार बताया कि उनका जन्म तो राक्षसों के अन्याय, राक्षसी सभ्यता, वामाचार और ऋषि–मुनियों को कष्ठित करने रूप आपके पापों के प्रतिकार के लिए ही है। वानर राष्ट्र और सम्पूर्ण आर्यावर्त्त से प्रच्छन्न भौतिकवादी राक्षसी सभ्यता को हटाकर अध्यात्म और भौतिकता समन्वित वैदिक संस्कृति की ध्वजा लहराना ही मेरा जीवन ध्येय है। इसी ध्येय के लिये मेरा जीवन अर्पित है।

''तो क्या तुम्हारे द्वारा राज–द्रोह के विषय में दो–एक–बार जो कुछ सुना गया था, वह ठीक था?'' रावण ने साश्चर्य दुहराया।

हाँ, महाराज! मेरे राष्ट्रोद्धार के प्रयासों के विषय में आपने सर्वथा ठीक ही सुना होगा। मुझे उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा थी, और वह समय आ गया है। फिर भी अब आप मेरा पथ्या रूपी वचन श्रवण करो। राक्षसेन्द्र! मैं सुग्रीव के संदेश से तेरे पास आया हूँ, तेरा भ्राता वानर राज सुग्रीव तुझे कुशल समाचार देता है। अब तू अपने महात्मा भाई सुग्रीव का धर्मार्थ युक्त, लोक–परलोक में सुख देने वाला सन्देश सुन–

''अयोध्या में बड़ी सेना वाले, समृद्धिशाली, इन्द्र सम प्रतापी तथा पिता के समान प्रजा की पालना करने वाला राजा दशरथ के अति प्रिय महाबाहु ज्येष्ठ पुत्र श्रीराम पिता की आज्ञा से दण्डक वन में आये हैं। उनके साथ भ्रातृ भक्त छोटा भाई लक्ष्मण तथा राम की पतिव्रता पत्नी विदेह राज महात्मा जनक की पुत्री सीता भी आई थी।''

''वन में राम की स्त्री सीता लोप हो गई, यह सर्वत्र प्रसिद्ध है। सीता को ढूंढ़ते हुए वह दोनो राजपुत्र ऋष्यमूक पर्वत पर सुग्रीव से मिले। सुग्रीव ने सीता के ढूंढ़ने की प्रतिज्ञा की है तथा राम ने सुग्रीव से उसका राज्य दिलाने की प्रतिज्ञा की थी सो राम ने एक ही बाण से बाली को मार कर सुग्रीव को राज्य दिला दिया है। तुम जानते ही हो, कि बाली कैसा बली था, किन्तु उसे राम ने एक बाण से ही मार दिया।''

रावण को उपदेश

इस प्रकार राम–कथा सुनाकर हनुमान् फिर रावण को उपदेश करने लगे, ''नर शार्दूल! यदि तुम कहो, कि सीता यहाँ नहीं है, तो निश्चय रखिये मैंने सीता देवी देख ली है, जो कि मेरे लिए दुर्लभ कर्म था। यदि तुम सीता को राम को अर्पण नहीं करोगे तो समझ लेना कि सीता को राम ले जायेंगे। विश्वास रखो कि सीता किसी को उसी प्रकार नहीं पच सकती, जैसे कि विष युक्त अन्न। तुम सीता को घर में रखते हुए भी उसके फल को नहीं जानते। स्मरण रखो कि तुम्हारे लिए वह पंचमुखी सर्पिणी ही है।

''महाराज! आप ने जो पूर्व जन्म कृत तप तथा धर्मानुष्ठान से ऐश्वर्य व दीर्घ जीवन प्राप्त किया है सो इस पर स्त्री–हरण रूपी अधर्म से नष्ट करना उचित नहीं है। जो आपका यह विचार हो, कि पूर्व संचित धर्म से यह किंचित अधर्म नष्ट हो जाएगा सो यह भी ठीक नहीं, क्योंकि यह साधारण दुष्ट कर्म नहीं प्रत्युत् महा अधर्म है और इसका फल कभी टल नहीं सकता।''

प्राप्तं धर्मफलं तावद्भ्वता नात्र संशयः।
फलमस्याप्यधर्मस्य क्षिप्रमेव प्रपत्स्यसे। ५१।२१

''राक्षसेन्द्र! जिस प्रकार तूने पूर्व कृत तप और धर्म का फल पाया है, इसी प्रकार अब शीघ्र ही इस अधर्म का फल पायेगा।''

''राजन! यदि तुझे पाप से भय नहीं, तो नीति

शास्त्र के अनुसार ही राक्षसों का वध, बाली का मरण, राम और महाराज सुग्रीव की मैत्री को देखकर, अपना हित चिन्तन कर, क्योंकि आर्य पुत्र राम ने वानर और ऋक्ष गणों के सामने प्रतिज्ञा की है कि जिन दुष्टों ने सीता का हरण किया है, उनका मैं नाश करूँगा। तुम्हें विदित रहे, कि राम का अहित करके इन्द्र भी सुख नहीं पा सकता, फिर तुम जैसे साधारण पुरुषों की तो कथा ही क्या है? रावण! सच तो यह है कि जिसे तुम सीता देवी समझते हो वह तुम्हारे लिए काल रात्रि है, जो सारी लंका को नष्ट कर देगी। अतएव तुम सीता देह रूपी काल–पाश में फँसकर स्वयं अपना हनन मत करो, किन्तु अपनी रक्षा का विचार करो और सीता के तेज से दग्ध, तथा राम के कोप से प्रदीप्त होकर बड़े–बड़े राजमहलों युक्त लंका को भस्म हुई समझ कर सीता को प्रसन्नता से राम को लौटा दो। उन्हें लंका में रखकर अपने मित्र, नीति–निपुण मन्त्री, सजातीय बन्धु, भाई, पुत्र, हित वर्ग, भोग, ऐश्वर्य, स्त्री गण और लंका को व्यर्थ में नष्ट मत करो। यह मेरा कहना सत्य ही मानो। यदि तेरा विचार राम से युद्ध करने का हो, तो मैं तुझे कहे देता हूँ कि राम को जीतना तो कहाँ वरन् महापराक्रमी, विष्णु समान बली राम के सामने तेरा जीवित रहना भी कठिन है।''

हनुमान के वध की आज्ञा और विभीषण की उचित सम्मति–इस प्रकार महावीर के सत्य और निर्भीक वचनों से क्रुद्ध होकर रावण ने उनको वध करने की आज्ञा दी, जिसे सुनकर महात्मा विभीषण ने इस आज्ञा के विरूद्ध राक्षसेन्द्र से कहा कि–

''महाराज! इस कपि के मारने में किसी प्रकार का लाभ नहीं दिखाई देता। यही दण्ड आप उनमें प्रयोग करो जिन्होंने इनको भेजा है।

सधुर्वा यदि वाऽसाधुः परैरेश समर्पितः।

ब्रू वन्पराथ परवान न दूतौ वधमर्हति।।५२।२१

''यह साधु है व असाधु किन्तु दूसरों ने इसे भेजा है। उनके लिए बोलता हुआ पराधीन है, इसलिए यह वध के योग्य नहीं है। इस दूत के मार देने पर फिर कोई अन्य व्यक्ति दूत कार्य नहीं करेगा। इसलिए भी इसका वध अयुक्त है क्योंकि ऐसा करने में नीति भंग होती है।''

महात्मा विभीषण के शास्त्र विहित वचनों से विवश होकर रावण बोला, भ्राता! तूने ठीक कहा है कि दूतों का वध करना निन्दा के योग्य कर्म है इसलिए वध के अतिरिक्त कोई उचित दूत–दण्ड नियत करो।

शुभ सूचना

स्त्री आर्य समाज धामावाला, सब्जी मण्डी देहरादून की प्रधाना डॉ० (श्रीमती) निर्मला भारद्वाज ने सूचित किया है कि स्त्री आर्य समाज देहरादून के द्वारा निर्धन हिन्दू परिवारों की दो कन्याओं का विवाह कराने की योजना है। कन्याओं के लिए वर की तलाश उनके अभिभावकों द्वारा ही की जायेगी। अधिक जानकारी के लिए निम्न पदाधिकारियों से सम्पर्क कर सकते हैं। डॉ० (श्रीमती) निर्मला भारद्वाज, मोब. 9412346478, श्रीमती अरुणा गुप्ता, मोब. 9837411160

अनोखा जिज्ञासु

–यशपाल आर्यबन्धु (मुरादाबाद)

जिज्ञासा मनुष्य में पाई जाने वाली एक सहज स्वभाविक प्रवृत्ति है। जिज्ञासा, मननशीलता, विवेक तथा कर्म करने की क्षमता आदि कतिपय ऐसे विशेष गुण हैं कि जिनके कारण मनुष्य को विधाता की विशिष्टतम कृति माना जाता है। शैशव काल से ही यह प्रवृत्ति बच्चे में जागृत हो जाती है, जो कि बाल्यावस्था में जाकर और तीव्र एवं प्रबल हो जाती है। किन्हीं–किन्हीं बच्चों में तो जिज्ञासा इतनी प्रबल हो उठती है कि कभी–कभी ऐसे जटिल प्रश्न कर बैठते हैं कि जिनका उत्तर देने में अथवा समाधान करने में बड़े–बड़ों की अकल भी चकरा जाती जाती है। कभी–कभी तो प्रश्न का उत्तर न बन पाने से किन्तु बालक द्वारा बार–बार पूछे जाने पर हम उसे झिड़क भी देते हैं। ऐसा करने से बालक की कोमल जिज्ञासा–प्रवृत्ति कुण्ठित हो जाती है। जबकि समुचित समाधान से बालक की इस प्रवृत्ति को और भी बल मिलता है जिससे उसकी बुद्धि एवं ज्ञान का समुचित विकास होता है। जिन बच्चों में प्रारम्भ से ही जिज्ञासा की यह प्रवृत्ति प्रबल होती है, ऐसे बच्चे प्रायः जीवन भर ही जिज्ञासु बने रहते हैं और ऐसे रहस्यों को खोज निकालते हैं कि लोग दंग रह जाते हैं। वस्तुतः ऐसे ही प्रबल जिज्ञासु ईश्वर की रचना के रहस्यों को उद्‌धाटित करने में सफल होते हैं। इतिहास साक्षी है कि सभी प्रसिद्ध अविष्कारों के पीछे यही जिज्ञासा की प्रवृत्ति कार्य करती दिखाई देती है।

मूलशंकर एक ऐसी ही असाधारण जिज्ञासु प्रवृत्ति का धनी बालक था। जो गुजरात के मोरवीराज्यान्तर्गत टंकारा ग्राम के बाहर स्थित एक शिवालय में अपनी तीव्रतर जिज्ञासा के कारण विश्वविख्यात हुआ। चूहे की उछल–कूद ने मूलशंकर के मस्तिष्क को उद्वेलित कर दिया कि यह कैसा शिव है जो एक चूहे से भी अपनी रक्षा करने में समर्थ नहीं तो फिर संसार की रक्षा कैसे कर सकता है। जब जिज्ञासा प्रश्न बनकर पिता के सम्मुख प्रकट हुई तो समुचित सामाधान की बजाये झिड़क दिया गया और पीछा छुड़ाने के लिए जब यह कहा गया कि असली शिव तो कैलाश पर्वत पर रहते हैं, यह तो उनका प्रतीक मात्र है बालक की जिज्ञासा प्रतिज्ञा बनकर प्रस्फुटित हुई कि ''मैं सच्चे शिव को खोजकर के उसकी पूजा करूंगा।'' अब बालक के मन में यही विचार उठने लगे सच्चे शिव के दर्शन कैसे हों? वह कहां मिलेगा?

यह विचार अभी उस जिज्ञासु हृदय को कुरेद ही रहे थे कि एक और ऐसी घटना घट गई कि जिसने उसके जीवन की धारा को बदल कर रख दिया। वह थी उसकी बहन की मृत्यु की दुःखद घटना। मूलशंकर की बहन की मृत्यु पर जहां सारा परिवार शोकाकुल होकर रो–धो रहा था, वहां यह जिज्ञासु बालक जीवन और मृत्यु क्या है? क्या मुझे भी एक न एक दिन मृत्यु का ग्रास बनना ही पड़ेगा? और क्या संसार में ऐसा भी कोई स्थान है जहां मृत्यु के इन महाक्रूर पंजों से बचा जा सकेगा? विचारों की इसी उधेड़बुल में तथा भयातिरेक के कारण बालक अवसन्न होकर रह गया। सब रो रहे थे किन्तु उस बालक से रोया नहीं गया और न रोने के कारण घर के सभी लोग उसे महानिष्ठुर कहने लगे। उन्हें क्या पता था कि उसका हृदय रो रहा है, भले ही आंखें शुष्क हों। पर क्या शुष्क आंखों से भी कोई रोता है? किन्तु सच्चाई यह है कि है–

रोने के लिए लाजिम नहीं आँसू जो बहायें,
रोये अगर जो दिल तो आँसू कहाँ से लायें।

वस्तुतः भीगी आँखों को देखकर हृदय की वेदना को कभी भी कोई आंक नहीं सकता। किन्तु जब हमने आँसू को ही दर्द का पैमाना मान लिया हो तो हृदय की गहराई में कौन क्यों उतरने लगा? ध्यान रहे–

चश्मे पुरनम से गमे दिल का न अन्दाज करो।
जोर साहिल पे तूफां का कहां होता है?

बहन की मृत्यु ने मूलशंकर के हृदय को व्यथित किया ही था कि उसके चाचा की मृत्यु ने तो उसके मन में प्रबल वैराग्य उत्पन्न कर दिया। बालक में प्रबल वैराग्य वृत्ति उत्पन्न होते देखकर घर वालों ने उसके विवाह की योजना बनाई किन्तु बालक को जब इसका अभास हुआ तो वह घर से निकल भागा सच्चे शिव और अमरत्व की तलाश में। फिर कहां–कहां की उसने खाक छानी, किधर–किधर जाकर टकरें मारीं, कैसी–कैसी साधना की, क्या–क्या कष्ट उठाये, किस–किस से क्या सीखा, यह सब एक लम्बी कहानी है। अन्त में मूलशंकर से शुद्धचैतन्य होते हुए सन्यास की दीक्षा लेकर दयानन्द नाम धरकर महान् वैयाकरण प्रज्ञाचक्षु गुरुवर विरजानन्द का द्वार जा खटखटाया। यह एक अनोखा तो सहज स्वाभाविक प्रश्न हुआ कि कौन है? किन्तु जिज्ञासु का उत्तर सर्वथा अप्रत्याशित कि ''यही जानने तो आया हूँ भगवन'' कविवर सौमित्र इस अनुपम दृश्य का चित्रण करते हुए क्या सुन्दर लिखते हैं–

विरजानन्द गुरुवर की कुटिया, अपलक नयन बिछाये।
जोह रही थी वाट, ज्योति का चिर अधिकारी आये।।

धन्य हुआ वह भोर, तपस्या फूली नहीं समायी।
एक दिवस प्यासे अधरों ने जब आवाज लगाई।।

जिसे लिये, विकलता गुरु की, रात–रात जागी थी।
आज उसी ने गुरु चरणों में स्वयं शरण मांगी थी।।

दस्तक सुन कुटिया के भीतर से यह प्रश्न जगा था।
तुम हो कौन? प्रश्न का उत्तर प्राणों मे उमगा था।।

मैं हूँ कौन? जानने को ही आयी है जिज्ञासा।
अमृत–सिन्धु के द्वार खड़ा है कोई मरुथल प्यासा।।

ज्ञान–सूर्य उत्तर पाकर यह, गद्–गद् छलक उठे थे।
मुक्ति तृषा के प्राण, अमृत पी–पीकर पुलक रहे थे।।

आदि–अन्त का मिलन देखकर जैसे चकित गगन हो।
वह हो दृश्य अपूर्व, धेनु का जैसे वत्स मिलन हो।।

ऐसा था गुरु–शिष्य का अपूर्व मिलन, अनोखा सम्वाद। इसके पीछे प्रबल जिज्ञासा ही तो कार्य कर रही थी। जिज्ञासु भाव से ही तो शिष्य ने कहा था–

पूछते गुरुवर दयानन्द कौन है–
आप बतलाओ कि हम बतलाये ही क्या?
पूछते हैं लोग हस्ती का सबब,
हम अभी खुद ही नहीं समझे तो समझायेंगे क्या?

गुरुवर विरजानन्द के चरणों में बैठकर स्वामी दयानन्द ने वेदों का गम्भीर अध्ययन किया और तब जाकर उन्हें सही दिशा का बोध हुआ। और जब आर्य–अनार्य का, सत्य–असत्य का विवेक जागृत हुआ तो गुरु की आज्ञा पाकर असत्य मतों के खण्डन के लिए तथा सत्य मत के प्रतिपादन के लिए कार्यक्षेत्र में उतर पड़े। इसके लिए भी पक्ष–विपक्ष के सभी ग्रंथों के अध्ययन की आवश्यकता थी और महर्षि ने कितना गम्भीर स्वाध्याय किया इसका पता महर्षि के भ्रांति निवारण के निम्न लेख से भली–भांति चल सकता है। महर्षि लिखते हैं ''मैं अपने निश्चय और परीक्षा के अनुसार ऋग्वेद से लेकर पूर्वमीमांसा पर्यन्त अनुमान से तीन हजार ग्रंथों के लगभग मानता हूँ।'' ये तीन हजार वे ग्रंथ हैं जो महर्षि को मान्य हैं। अमान्य एवं त्याज्य ग्रंथों की संख्या भी कुछ इनसे कम न होगी। इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि जिज्ञासु दयानन्द ने कितना गहन अध्ययन किया था।

क्या आपने कभी विचारा कि महर्षि इतना अध्ययन कैसे कर पाये? प्रबल ज्ञान पिपासा के कारण ही, अपनी अनोखी जिज्ञासा के कारण ही। आज उसी की जिज्ञासु वृत्ति को जागृत करने की आवश्यकता है। ज्ञान की पिपासा उत्पन्न करने की आवश्यकता है। जिस दिन यह हो जायेगा निश्चय जानिये, आज्ञान अंधकार के पांव इस संसार में टिके नहीं रह सकेंगे। आइये। शिवरात्रि के इस पावन पर्व पर हम व्रत लें गम्भीर स्वाध्याय का ताकि हमें भी कुछ बोध हो सके। तभी यह पर्व मनाना सार्थक होगा।

विलक्षण महर्षि–दयानन्द जी

–महात्मा चैतन्य मुनि

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ऐसे ऐतिहासिक महापुरुष हैं जो अपने आप में अनुपम एवं विलक्षण हैं। वे ईश्वर–भक्त, योगाभ्यासी, वीतराग संन्यासी, तपस्वी, त्यागी, ब्रह्मचारी, वित्तैषणा– पुत्रैषणा–लोकैषणा रहित, सत्यान्वेशी, शास्त्रार्थ समर के अजेय योद्धा, राष्ट्र–भक्त, वैदिक प्रलोभन भी उन्हें अपने आदर्शों से विमुख नहीं कर सका। उनके सामने किंचत–मात्र भी अपना किसी प्रकार का स्वार्थ नहीं था बल्कि उन्होंने अपना सर्वस्व मानव–मात्र की सेवा में समर्पित कर रखा था। रात–दिन बस एक ही चिन्ता कि आर्यावर्त की ज्ञान–गरिमा को पुनः प्रचारित व प्रसारित करके समृद्ध कैसे करें ताकि हमारा वही प्राचीनतम खोया हुआ गौरव हमें प्राप्त हो सके। उनका मानना था कि महाभारत के भयंकर युद्ध के समय से ही इस विश्व–गुरू आर्यावर्त्त का पतन आरम्भ हुआ और तत्व–वेत्ता, आत्म वेत्ता एवं वेद–वेत्ता ऋषियों के आभाव में यह पतन निरन्तर और अधिक आत्मघाती होता चला गया जो भी तथाकथित समाज सुधारक कार्यक्षेत्र में निकला वही किसी न किसी अपनी एषणा का शिकार हो कर इस महान् भारत को रसातल की ओर ही ले जाता रहा। किसी में भी इतना साहस नहीं था कि एषणा रहित होकर एक ईश्वर, एक धर्म तथा मानव–मात्र के उत्थान के लिए एक जीवन– पद्धति की उदघोषणा कर सके। इस प्रकार ये दिशाहीन तथाकथित समाज सुधारक, गुरु, पैगम्बर एवं मसीहा मानवता को और भी अधिक खण्डित करने का ही पाप करते रहे।

वर्तमान में स्थिति और भी अधिक विकट से विकटतर होती जा रही है। दिन–प्रतिदिन नए से नया कोई व्यक्ति उठ खड़ा होता है और अपने लिए एक नई–नई ही जमात अलग से पैदा कर लेता है। अलग–अलग मनुष्य–कृत ग्रन्थों को मान्यता मिल रही है, अलग–अलग गुरु–मंत्र दिए जा रहे हैं, अलग–अलग पूजा पद्धतियों प्रचलित हो रही है....उन्हीं की आरतियां उतारी जा रही हैं....उन्हीं की बढ़ाई में भजन गाए जा रहे हैं....धर्म एक पाखण्ड बन गया है.....योग एक व्यवसाय बन गया है.....कितना बड़ा अपराध हो रहा है....बड़े–बूढ़े सब दिशाहीन हो रहे हैं....भावी पीढ़ी किंकर्त्तव्य विमूढ़ हो रही है.....राष्ट्र टूट की कगार पर खड़ा है.....सामाजिक समरसता छिन्न–भिन्न हो रही है....अनाचार है, दुराचार है भ्रष्टाचार है, द्वेष है, घृणा है, जातिवाद है, मत मजहबवाद है.....चारों ओर आतंकवाद का वातावरण है....यह सब हो रहा है अपने–अपने स्वार्थों के कारण। बीच में से यदि अपना–अपना स्वार्थ हट जाए तो आज भी एक आदि वैदिक धर्म की स्थापना हो सकती है, एक ईश्वर की ही उपासना हो सकती है, सबका एक ही गुरु–मंत्र हो सकता है, सामाजिक समरसता स्थापित हो सकती है और अपना यह देश पुनः विश्वगुरु बन सकता है विश्व–बन्धुत्व का सपना साकार हो सकता है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी अपने आप में कितने अनुपम एवं विलक्षण व्यक्तित्व के मालिक थे कि उन्होंने कहीं भी, कभी भी अलग मत चलाने की कल्पना तक नहीं की। अपनी स्तुति, अपनी पूजा तथा अपना अलग से वर्चस्व स्थापित करना तो दूर रहा इस प्रकार की सोच भी उनके

लिए न्यायकारी परमात्मा की दृष्टि मे महान् अपराध था। उनके लिए तो ईश्वरीय ज्ञान ''वेद'' ही सर्वोपरि रहा। महाभारत काल से पूर्व जितने भी ऋषि–महर्षि हुए, तत्व–वेत्ता हुए, आचार्य हुए, महापुरुष हुए किसी ने भी अपना अलग मत या सम्प्रदाय चलाने का अपराध नहीं किया। ब्रह्मा, शिव, विष्णु, मनु, वशिष्ठ, विश्वामित्र, लोमश, याज्ञवल्क्य, गौतम, कणाद, कपिल, पतंजलि, जैमिनी, व्यास, मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राम, योगेश्वर श्रीकृष्ण आदि अनेक दिव्य विभूतियों के लिए ईश्वरीय ज्ञान वेद ही सर्वोपरि था। आज व्यक्ति का इतना अधिक अधःपतन हो गया है कि अज्ञानी, अनपढ़, कुपढ़ व्याकरण और वेद विहीन व्यक्ति भी लोगों को धर्म, कर्म, उपासना, नाम व मन्त्र का उपदेश देकर दिग्भ्रमित करने का महापाप कर रहे हैं। व्यक्ति द्वारा किए गये बुरे कर्मों से छुटकारा दिलवाकर भवसागर पार कराने की गारण्टी दे रहे हैं तथा मूर्ख लोग उनके झांसे में आकर अपना लोक–परलोक बिगाड़ रहे हैं। अविद्या एवं अज्ञानता से भरपूर नई–नई अप्रमाणिक पुस्तकें लिखकर उन्हें सर्वमान्य घोषित करने का अधम कार्य कर रहे हैं। तनिक भी लज्जा नहीं, परमात्मा का भय नहीं....तनिक विचार करें कि क्या ये तथाकथित स्वयं को गुरू–ज्ञानी घोषित करने वाले लाल–भुजक्कड़ उन प्राचीन ऋषियों–महर्षियों, आप्त महापुरुषों, आचार्यों एवं तत्व–वेत्ताओं से भी बड़े हो सकते हैं.....?

इसे परमपिता मरमात्मा की अपार कृपा और भारतवर्ष का सौभाग्य ही कहा जाएगा कि आधुनिक युग में उपरोक्त ऋषियों–महर्षियों की ही परम्परा में दण्डी स्वामी विरजानन्द जी के विलक्षण शिष्य महर्षि दयानन्द सरस्वती जी जैसे मनीषी का प्रादुर्भाव हुआ जिनके लिए वेद ही सर्वोपरि था। जिनके लिए उपरोक्त ऋषि–महर्षि, आचार्य एवं आत्म–वेत्ता ही अनुकरणीय थे। उन्होंने वेद को अपौरूषेय अर्थात् चार ऋषियों के माध्यम से स्वयं परमात्मा द्वारा दिया गया ज्ञान घोषित किया तथा वेदों के अतिरिक्त शेष समूचे संस्कृत वांगमय को दो भागों में विभक्त करते हुए आर्ष और अनार्ष दो संज्ञाएं दी। वेदानुकूल महाभारत काल के बाद की सामान्य मनुष्यों द्वारा लिखी पुस्तकों को अनार्ष घोषित किया। उन्होंने केवल आर्ष ग्रन्थों को ही प्रमाण माना तथा समस्त अनार्ष ग्रन्थों को अप्रमाणित श्रेणी में रखने का पुण्यकार्य किया। उन्होंने आर्ष एवं अनार्ष ग्रन्थों में भेद करने के लिए कुछ सूत्र भी प्रस्तुत किए। आर्ष ग्रन्थों के आरम्भ में प्रायः अथ अथवा ओ३म् शब्द मिलता है जबकि अनार्ष पुस्तकों को दुर्गायैनमः, सरस्वत्यै नमः, नारायणाय नमः तथा श्रीगुरूचरणा–रविन्दाभ्यां नमः आदि शब्दों से आरम्भ किया जाता है। समस्त आर्ष ग्रन्थ सार्वभौमिक सत्य का प्रतिपादन करते है और संशयनाशक एवं लोकोपकारक है और आप्त मनीषियों द्वारा लिखी गई है परन्तु अनार्ष ग्रन्थ भ्रमोत्पादक तथा सांप्रदायिक संकीर्णता, द्वेष, घृणा एवं प्रमाद से भरे हुए हैं और इनमें परस्पर गहरा मतभेद है। अनार्ष ग्रन्थों की टीकाएं समान्य सांसारिक व्यक्तियों ने लिखी हैं। यह तो आर्ष तथा अनार्ष ग्रन्थों के सम्बन्ध में दिशा–निर्देश हैं मगर आज तो तथाकथित गुरूओं, सन्तों, पीरों और पैगम्बरों द्वारा इससे भी निम्नस्तर की पुस्तकें लिखी जा रहीं हैं और उन्हें ही अपनी–अपनी जमात में सर्वमान्य घोषित करके बाबा–वाक्यं प्रमाणम् की कुरीति एवं कुनीति सिर चढ़कर बोल रही है। अन्धों को मार्ग दिखाने वाली बात चरितार्थ हो रही है इसलिए आदि ऋषि–महर्षियों की परम्पराओं के पोषक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के चिन्तन को आज आत्मसात् करने की नितान्त आवश्यकता है।

भारतीय पर्व और शिवरात्रि

–प्रा० भद्रसेन

भारत एक प्राचीन और विशाल देश है। भारतीय मनीषियों ने भारतीयता के संरक्षण, संवर्धन, प्रोत्साहन के लिए पर्वों की परम्परा को प्रतिष्ठित किया। पर्व शब्द पृ और प्री धातु से निरुक्तकार ने साधा है, जिस से पूरण=संगठन और तृप्ति=प्रसन्नता अर्थ सामने आते हैं। तभी तो पर्वों पर उनके मनाने वालों में मेल, संगठन की भावना स्पष्ट सामने आती है। पर्व का संगठन, मेल अर्थ पर्व(पर्व=मेल, त=वाला) शब्द में आज भी अभिहित होता है, पर्व का तद्भव पोरा(अंगुलियों, गन्ने की)=गांठ अर्थ में प्रचलित है। पर्व शब्द का प्रथम प्रयोग अमावस्या, पूर्णिमा के लिए आया है, जिनके दोनों ओर पन्द्रह–पन्द्रह दिन का मेल है। अतएव पन्द्रह दिन के लिए पक्ष, पर्व शब्द चलता है। प्रारम्भ में दार्शयाग, पौर्णमास याग अमा और पूर्णिमा को होते थे अतः ये विशेष याग आज के पर्वों के प्राथमिक रूप हैं। तभी तो कुछ ग्रामों और धार्मिक परिवारों में आज भी पूर्णमासी आदि की कथा होती है। प्रत्येक पर्व पर प्रसन्नता, उल्लास, उत्साह, खुशियां सर्वत्र दृष्टिगोचर होती हैं, जो प्री(तृप्तौ) से पर्व सिद्धि को भी सूचित करती है।

भारतीय पर्वों में ऋतु पर्वों की अधिकता है, अतः विजयदशमी, दीपमाला, होली, बसन्त, वैशाखी, तीज, बीहु, पोंगल आदि अनेक पर्व ऐसे हैं। हमारे शरीर के भौतिक होने से यह ऋतुओं से प्रभावित होता है, अतः बदलती ऋतुओं के साथ दिनचर्या के खान–पान, वस्त्रधारण, रहन–सहन के नियमों में परिवर्तन लाने का सन्देश देना ही ऋतुपर्वों का मुख्य महत्व है अर्थात् बदलती ऋतु के अनुकूल दिनचर्या को परिवर्तित करना एक समझदारी है।

ऋतु पर्वों के साथ कुछ पर्व धार्मिक दृष्टि से तो कुछ पर्व महापुरूषों के प्रति कृतज्ञता की भावना से आयोजित होते हैं। आज धर्म शब्द पूजा से अधिक जुड़ गया है तथा अपने महापुरूषों के प्रति श्रद्धा की अभिव्यक्ति पूजा की एक प्रक्रिया ही बना दी गई है। अतः आज ये दोनों पर्व एक रूप को धारण कर गए हैं। जैसे कि शिवरात्रि, दुर्गापूजा, गणिपतिपूजन, रामनवमी, कृष्णजन्माष्टमी, बुद्ध जयन्ती, गुरुनानक जन्म दिवस आदि।

शिवरात्रि, दुर्गापूजा, गणिपति पूजन का आज का प्रचलित रूप यह सिद्ध करता है, कि इन पर्वों, आयोजनों को मनाने वाले अनेक देवी–देवताओं को इष्टदेव के रूप में स्वीकार करते हैं। आज जिस प्रकार से इनकी स्तुति, अर्चना की जाती है, उससे तो यही सिद्ध होता है, कि इन–इन की अपनी–अपनी स्वतन्त्र सत्ता है, और यह ही इस जग का कर्त्ता–धर्ता–संहर्त्ता है। वह किसी की शक्ति, अंश नहीं है। ऐसी भावना को प्रकट करते हुए भक्तगण साथ के साथ यह भी स्वीकार करते हैं कि दुनिया बनाना, बना के चलाना, बस उसी का काम है। ऐसी स्थिति में सोचने वाले के लिए एक समस्या खड़ी हो जाती है, कि जब जगत की व्यवस्था एक रूप में है, तो तब उसका व्यवस्थापक भी एक ही होना चाहिए। इतने सारे ईश्वरों के साथ इसका तालमेल कैसे होगा?

1838 में जब पहली बार मूलशंकर ने शिवरात्रि का व्रत रखा और रात को वहां जो देखा उसका सुनी हुई शिवकथा के साथ तालमेल नहीं लगा। इसके जचाव के लिए पिता को जगाकर पूछा, पर पिता जी कोई सन्तोषजनक उत्तर न दे सके। केवल यह कह कर अपना पिंड छुड़वा लिया कि असली शिव तो कैलाश में रहते हैं।

शिव कथा कि चर्चा और व्यवहार में तालमेल जचाव है या नहीं? यदि है तो कैसे है?

इस वास्तविकता की खोज में मूल से शुद्ध चैतन्य ब्रह्मचारी और फिर दयानन्द संन्यासी बन कर 1846 से 1860 तक का समय लगाया। अन्त में 1861 से 63 तक ब्रह्मर्षि गुरु विरजानन्द जी ने आर्ष ज्ञान रूपी कुंजी हाथ में दे दी। उसके माध्यम से महर्षि ने वेद और वैदिक वांगमय का आलोड़न किया। 1878 तक लगातार चले आलोड़न से महर्षि दयानन्द ने अपने भाषणों और सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका जैसे ग्रंथों द्वारा इसको स्पष्ट किया। उस 1838 की शिवरात्रि से उभरी अपनी जिज्ञासा के समाधान का ऋषि को जो बोध प्राप्त हुआ, वही शिवरात्रि का मर्म कहा जा सकता है।

शिव का मर्म

ऋषि ने अपनी सतत् साधना से शिव का मर्म यह अनुभव किया कि इस सारे संसार की रचना, व्यवस्था यह अनुभव कराती है, कि इसका कर्त्ता–धर्त्ता एक ही तत्व है। वेद आदि शास्त्रों के सहस्त्रों वचन इस तत्व की एकता का वारम्वार निर्देश करते है। यह सृष्टि विसृष्टि है। इयं विसृष्टि यत आवभूव ऋग् १०,१२६,७। अतः अनन्त और विचित्र है। इस विविधता के नाना रूपों के कारण इस रचनाकार के ईश्वर, ब्रह्म, शिव आदि अनेक नाम हैं, जो कि इस परम तत्व के गुणों, कर्मों, स्वाभावों की अनन्तता के कारण नाना हैं। क्योंकि धातु प्रत्यय की यौगिकतावशात् शब्द सीमित अर्थ ही अभिव्यक्त कर सकता है जैसे कि–

शिव शब्द शिवु(कल्याणे) धातु से सिद्ध होने से कल्याण, सुख का वाचक है तभी तो शिव के शंकर, शम्भु, मयोभू, मयस्कर, मृड आदि पर्यायवाची कल्याण, सुख अर्थ को ही बताते हैं। पर शिव शब्द जब रात्रि के साथ जुड़कर प्रयुक्त होता है, तो रूढ़ अर्थ में अभिहित होता है रात्रि प्रलय अर्थ में भी आई है, ब्रह्मदिन, ब्रह्मरात्रि मनुस्मृति १,७२, इसके उदाहरण हैं। त्रिमुर्ति, त्रिदेव, ब्रह्मा, विष्णु, महेश की प्रचलित भावना के अनुसार शिवरात्रि का शिव प्रलय कर्म का कर्त्ता है आजकल शमशान भूमि को शिवपुरी कहा जाता है, शिव के गुण संहारक ही माने जाते हैं। संहारकर्म के कारण शिव को रूद्र भी कहा जाता है। यजुर्वेद में रूद्राध्याय में ऐसे रूप का भी वर्णन है।

विविध नामों के कारण नाना देवी–देवताओं में बंटे हुए धार्मिक वर्ग के घृणा, विरोध भरे हुए व्यवहार को देखकर और उससे भी अधिक इन माने गए देवी–देवताओं में परस्पर शत्रुता भरे विरोध को देखकर महर्षि हैरान रह गए। क्योंकि संस्कृत साहित्य में और विशेष रूप से पुराणों, उपपुराणों में सैकड़ों ऐसे चित्रण मिलते हैं जिनमें परस्पर विरोधी अनेक घटनाऐं आई हैं, इसी आधार पर आजकल शनि देवता का चलचित्र चल रहा है और उसमें इन देवताओं के अनेक युद्ध दर्शाए गए हैं। जनता को इस असमंजस से निकालने के लिए महर्षि ने जो समाधान, जचाव प्रस्तुत किया वह केवल अपनी तर्कणा से ही प्रस्तुत नहीं किया, क्योंकि वेद, उपनिषद आदि में ऐसे अनेक मन्त्र हैं जिनमें यह नाम हैं। इन शब्दों की योगिता से मन्त्रों में स्पष्ट रूप से एक ईश्वर की ही अभिव्यक्ति होती है, और मन्त्रों में प्रयुक्त विशेषण तथा क्रियायें भी इन नामों से एक ईश्वर का स्पष्ट चित्रण करती है। इस दृष्टि से–

इन्द्रं मित्रम्–ऋ० १, १६४, ४६ तदेवाग्निस्तदादित्यः यजु० ३२,१ स धाता विधर्ता स वायुर्नम उच्छ्रितम् अथर्व० १३, ४, ३–५

अपने अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समुल्लास में महर्षि दयानन्द ने वेद की कुंजी दी है। जिससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि सृष्टि कर्ता, धर्ता आदि प्रकरण में ये विविध नाम एक ईश्वर के ही हैं। ऐसे स्पष्ट समाधान की उपस्थिति में वेदों को बहुदेवों का प्रतिपादक नहीं कहा जा सकता।

''इससे क्या सिद्ध हुआ कि...ओ३म् और अग्न्यादि नामों के मुख्य अर्थ से....'' इन दस पंक्तियों के माध्यम से महर्षि ने एक अनोखा समाधान प्रस्तुत किया है। इस समाधान को स्वीकार किए बिना वेदों में प्रतीत होने वाले

विविध देवी–देवताओं के वर्णन का और कोई भी जचाव हाथ नहीं लगता।

जैसे कि हम अपने व्यवहार में देखते हैं, कि जब एक व्यक्ति अनेक तरह के कार्य करता है, तो पाचक, हाली, राज, मजदूर आदि उसके भिन्न–भिन्न नाम कार्य के अनुरूप स्वतः ही पुकारे जाते हैं। ऐसे ही अपने–अपने सम्बन्ध की भिन्नता से एक ही व्यक्ति को कोई पिता, कोई पुत्र, कोई भाई, पति, चाचा आदि पुकारता है। इसी प्रकार कर्म, गुण, आदि के कारण ईश्वर के अनेक कार्मिक, गौणिक नाम संस्कृत साहित्य में यथा प्रसंग चर्चित हुए हैं।

सत्यार्थ प्रकाश के एकादश समुल्लास में एक गुरु की सेवा करने वाले दो चेलों द्वारा दिखाया है, कि पहले तो कार्य की व्यवस्था, सुनिश्चितता की दिशा से उन्होंने शरीर का दांया, बांया भाग बांट लिया और अन्त में उतने मात्र को ही अपना गुरु मान बैठे। एक पैर के दूसरे पर पड़ जाने को मेरे गुरु की अवमानना हुई, समझ कर लड़ पड़े। ऐसे ही अपने–अपने प्रिय नाम को अलग–अलग स्वतंत्र सत्ता वाला अलग–अलग ईश्वर मान कर अनेक नामों से अनेक ईश्वर बना लिये गये।

एक ईश्वर की अपेक्षा अनेक देवों के भटकाव में भटकते भक्तों को भटकाव से बचाकर उनमें एकता समायोजित करने का प्रथम समुल्लास ही समाधान है। वेद में अग्नि, इन्द्र, विष्णु आदि से अनेक देवों का वर्णन नहीं है, यह तो एक ईश्वर का ही विश्लेषण है। प्रथम समुल्लास में दी गई वेदों की कुंजी ही इसका जचाव उपस्थित करती है और महर्षि दयानन्द ने शिव साधना से यही शिव का मर्म खोजा है। दुर्गापूजा, गणपति पूजन, शिवरात्रि व्रत में बंटते, उलझते भक्तों के लिए यही एकता का सूत्र है। हां, जरूरत है, कि कोई सभा, समाज इस ''वेद की कुंजी'' को छपा कर पाठकों के हाथों में पहुँचाए।

निष्कर्ष

इस समाधान से ये–ये निष्कर्ष सामने आते हैं।

1. सृष्टि के कर्ता–धर्ता और पूजा के प्रकरण में शिव, दुर्गा, गणपति आदि परमात्मा के ही नाम हैं।
2. जब सब देवी–देवताओं को परमात्मा का ही रूप मान लिया जायेगा तब उन–उन देवी देवताओं के अलग–अलग त्यौहार मनाने की जरूरत होगी। इससे पर्वों की संख्या स्वतः घट जाएगी।
3. इन तथाकथित देवी–देवताओं की स्वतंत्र सत्ता स्वीकार न करने से इनमें परस्पर शत्रुता भरे व्यवहार, युद्ध आदि का प्रसंग भी स्वतः निरस्त हो जाता है और तब इन संघर्षों की सत्ता हटते ही इसके कारण अनास्था वाली भावना को पनपने का कारण नहीं बनता।
4. इस तथाकथित देवी–देवताओं की कथा, पूजा, भक्ति, व्रत का अवसर नहीं आता है और उनके करने मात्र से ही सारी सांसारिक इच्छा पूर्ति का भ्रम भी न उपजेगा। तब पुरुषार्थ ही इस दुनिया में सारी कामना पूरी करता है। कि व्यावहारिक स्थिति को अपनाने से सरलता से प्रत्येक व्यक्ति सही ढंग से अपनी इच्छाओं की पूर्ति कर सकेगा।
5. शिवरात्रि आदि पर कथा, व्रत, कीर्तन, पूजन जैसा कर्मकांड ही होता है। मनुस्मृति १, १०८ में ''आचारः परमो धर्मः'' अर्थात् अच्छे आचरण को सबसे बड़ा धर्म कहा है तथा कर्मकांड सड़क के बोर्डों की तरह केवल प्रेरणा के लिए होता है। सभी पर्व, त्यौहार, समाजिकता, प्रसन्नता, प्रेरणा के लिए मनाए जाते हैं। अतः पर्वों का रूप ऐसा ही होना चाहिए, जिससे मनाने वालों को अनुकरणीय प्रेरणा प्राप्त हो।

ऋषि दयानन्द की वर्ष 1883 में मृत्यु पर कुछ प्रमुख पत्रों की सम्मतियाँ

ऋषि दयानन्द ने वेद प्रचारार्थ दिनांक 10 अप्रैल, 1875 को मुम्बई में ''आर्यसमाज'' संगठन की स्थापना की थी। आर्यसमाज कोई संस्था नहीं अपितु वेदप्रचार का एक अपूर्व आन्दोलन है। संसार से अविद्या का नाश तथा विद्या की वृद्धि करना इसका उद्देश्य है। इसी निमित्त ऋषि दयानन्द सरस्वती जी ने ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, सत्यार्थप्रकाश, संस्कारविधि, आर्याभिविनय, पंचमहायज्ञविधि, व्यवहारभानु, गोकरुणानिधि सहित ऋग्वेद–यजुर्वेद भाष्य एवं वेदांग प्रकाश आदि अनेक ग्रन्थों की रचना की है। काशी में ऋषि दयानन्द ने लगभग 30 शीर्ष विद्वानों से अकेले मूर्तिपूजा के वेदसम्मत होने या न होने पर शास्त्रार्थ किया था जिसमें ऋषि दयानन्द का पक्ष मूर्तिपूजा वेदविरुद्ध है, निश्चित हुआ था। ऋशि दयानन्द ने देश विदेश के सभी लोगों को ईश्वर का सत्य स्वरूप बताने के साथ ईश्वर उपासना की वेदसम्मत विधि ''सन्ध्या'' भी प्रदान की है। उन्होंने दैनिक देवयज्ञ अग्निहोत्र की विधि भी दी है। वेद अनुचित व अनावश्यक हिंसा के विरोधी हैं और अग्निहोत्र यज्ञ पूर्णतः हिंसारहित कर्म है। ऋषि दयानन्द ने अपने सभी ग्रन्थ हिन्दी भाषा में लिखे और अपने समय में हिन्दी का प्रचार–प्रसार भी किया। उन्होंने कहा है कि दयानन्द की आंखे वह दिन देखना चाहती है कि जब हिमालय से कन्याकुमारी तथा अटक से कटक तक देवनागरी अक्षरों का प्रचार होगा। देश की आजादी में भी ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज की सर्वोपरि महत्वपूर्ण भूमिका रही है। देश को स्वतन्त्र कराने सहित स्वराज्य का मूल मन्त्र ऋषि दयानन्द ने ही दिया था। यह भी बता दें कि कांग्रेस संगठन की स्थापना सन् 1885 में आर्यसमाज की स्थापना और सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ के प्रकाशन के बाद हुई। समाज में प्रचलित सभी अन्धविश्वासों, पाखण्डों, सामाजिक कुरीतियों व परम्पराओं पर भी ऋषि दयानन्द ने कड़े प्रहार किये। उन्होंने अज्ञान, अविद्या तथा अन्धविश्वासों से रहित वेद की व्यवस्थायें समाज में प्रचलित कीं। ऋषि दयानन्द ने समाज को रसातल में ले जाने वाली मूर्तिपूजा, फलित ज्योतिष, अवतारवाद तथा मृतक श्राद्ध आदि मान्यताओं का वेद प्रमाणों सहित तर्क एवं युक्तियों से खण्डन किया है। वह जन्मना जाति के विरुद्ध थे। उन्होंने ब्रह्मचर्यपूर्वक विद्या प्राप्त कर पूर्ण युवावस्था में समान गुण, कर्म व स्वभाव के युवक व युवती के विवाह का समर्थन किया है। उन्होंने ऐसे अनेक कार्य किये जो देश की स्वतन्त्रता और उन्नत भारत की नींव बने हैं।

ऋषि दयानन्द जी की दिनांक 30–10–1883 को दीपावली पर्व के दिन अजमेर में मृत्यु हुई थी। मृत्यु का कारण उनको जोधपुर में विष दिया जाना था। समाचार पत्रों ने ऋषि की मृत्यु के समाचार उनके विषय में अपनी सम्मतियों सहित प्रकाशित किये थे। हम इस लेख में कुछ समाचार पत्रों की सम्मतियां प्रस्तुत कर रहे हैं।

बंगाली, कलकत्ता

पंडित दयानन्द सरस्वती साधारण योग्यता के धर्मोपदेशक नहीं थे, उनके धर्म–मत चाहें हमें मान्य हों या न हों, उनके द्वारा किये गये वेदार्थ से चाहे हम असहमत हों, उस विषय में हमें कुछ कहना नहीं है। वे योगी थे और उन्होंने संसार का त्याग किया था। फिर भी उन्हें सांसारिक (लौकिक) ज्ञान इतना उत्कृष्ट था कि वैसा ज्ञान बहुत ही कम लोगों में दिखलाई देता था। उनके निधन से उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज की ही अपूरणीय क्षति हुई हो, ऐसी बात नहीं है, अपितु उनके निधन से समस्त राष्ट्र की ही विलक्षण क्षति हुई है। उनकी अप्रतिम विद्वता को लोग कभी भी नहीं भुला पायेंगे और स्वामी जी की याद सभी को अनवरत आती रहेगी और उनके प्रति सभी को गौरवानन्द भी अनुभव होता रहेगा।

ट्रिब्यून, लाहौर

हमें शोकाकुल कर परलोकवासी हुए स्वामी दयानन्द जी के उपदेशों का परिणाम केवल आर्यसमाज पर ही हुआ हो, ऐसी बात नहीं है, अपितु आर्यसमाज के अतिरिक्त अन्य लोगों के विचारों में भी परिवर्तन हुआ है। उन्होंने जो कुछ बताया या उपदेश किया वह सभी हमें मान्य है, ऐसी बात नहीं, फिर भी हम यह कहे बिना नहीं रह सकते कि, पंडित दयानंद एक असाधारण योग्यता के महापुरुष थे, और उनकी बुद्धि विशाल थी। उन्होंने अपनी अद्वितीय बुद्धि सामर्थ्य से (अनार्ष) शास्त्रों में पाये गये सभी पाखण्डों को खंडित किया था। यह बात अतिशय अभिनन्दनीय है कि, उनकी याद निरन्तर बनी रहे, इसलिये उनकी भक्तमंडली इस शहर में एक पाठशाला, उसमें वेद और अंग्रेजी के अध्ययन की व्यवस्था करवा रही है। यह बात भी सच है कि इस प्रकार की पाठशाला निर्बाध रूप से संचालित होने के लिये विपुल द्रव्य संकलित होना चाहिये। हमें यह विश्वास है कि स्वामीजी को चाहने वाले असंख्य लोगों के होने से वह द्रव्य अनायास ही एकत्रित हो जायेगा।

इंडियन एम्पायर, कलकत्ता

आर्यसमाज के प्रसिद्ध संस्थापक और वर्तमान पीढ़ी के प्रतिष्ठित सुधारक स्वामी दयानन्द के निधन की अति दुःखद वार्त्ता यथासमय न दे पाने के कारण हमें अतिशय पश्चाताप हो रहा है। उनकी अगाध विद्वता, अनुपम तार्किकता और प्रशंसनीय स्वातन्त्र्य प्रेम इत्यादि गुण इस युग के लोग कभी भी नहीं भुला सकेंगे।

हिन्दू पेट्रियट, कलकत्ता

पण्डित दयानन्द श्रेष्ठ वेदांती थे और वे वेदों की ऋचाओं का (अन्य वेदभाष्यकर्ता विद्वानों से अलग, निघंटु–निरुक्त पर आधारित) नया ही अर्थ करते थे। वे जब संस्कृत में बोलते थे, तब उनके व्याख्यानों की मधुरता से अतिशय (विलक्षण) आनंद मिलता था।

इंडियन क्रानिकल, बांकीपुर

संस्कृत के मार्मिक विद्वान, आर्य धर्म ग्रन्थों के पारंगत, मनोहर वाक्चातुर्य, उत्तम आदर–सत्कार इत्यादि जो–जो गुण उत्कृष्ट धर्मोपदेशकों में होने चाहियें, वे सब पं. दयानन्द जी में थे। धार्मिक क्षेत्र में सुधार करने के उद्देश्य से उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज चिरकाल तक बना रहेगा। 'भारत में आगे कौन–सा धर्म चले' जब इस सम्बन्ध में निर्णय लिया जायेगा, तब लोग उनके उपदेशों को (यदि अज्ञान व पक्षपात से ग्रस्त नहीं होंगे तो) भूलेंगे नहीं। हिन्दू धर्म का पुरातन विशुद्ध रूप पुनः प्रस्थापित कर उसमें रूढ़ हुये पाखण्डों को

बहिष्कृत करना—यह स्वामी जी का मुख्य उद्‌देश्य था।

हिन्दू आब्जरवर, मद्रास

पंडित दयानन्द सुप्रसिद्ध संस्कृत पंडित और पूर्णोत्साह से कार्य करने वाले (असाधारण व्यक्ति) थे। उनके निधन से देश की अपरिमित क्षति हुई है।

पंजाब टाईम्स, रावलपिण्डी

यह तो अत्यन्त ही आवश्यक है कि स्वामी दयानन्द के अति प्रचुर स्वेदशाभिमान के लिये, देशवासियों में उनका स्मरण निरन्तर करना चाहिये। उनमें वस्तुतः स्वदेशाभिमान के अतिरिक्त और भी अनेक गुण थे। श्रीमद् शंकराचार्य और तत्कालीन अन्य विद्या—महासागरों के समान इस पण्डित शिरोमणि की योग्यता थी। आधुनिक अतिनिकृष्ट काल में भी मानवमात्र में दृष्टिगोचर न होने वाले, परमोत्साह, बुद्धिमत्ता, और पुरुषार्थ, दृढ़तादि गुण स्वामी जी में कूट—कूट कर भरे हुए थे। उनके उपदेशों में प्रतिपादित धर्म, और उनके द्वारा स्वीकार किये हुए मत से, यदि कोई असहमत होता हो, तो हो, परन्तु भारतवर्ष में उत्पन्न हुए महापुरुषों में स्वामी दयानन्द की गणना करने से कतराना हमारी दृष्टि में उनके विचारों की अतिशय संकीर्णता और कार्पण्यवृति का परिचायक है।

गुजरात मित्र, सूरत

पुरातन प्रणाली के अनुसार धार्मिक क्षेत्र में सुधार करने वाला भारत का एक मुकुटमणि खो गया! आदि ग्रन्थ वेद के श्रेष्ठ विचारों का सम्मान्य अर्थ करने वाला पण्डित (दयानन्द रूपी) सूर्य अस्त हो गया। इतिहास में निर्मल कीर्ति—पताका फहराने वाला पंडितवर्य दयानन्द का अवतार समाप्त हो गया। स्वामी जी द्वारा किये गये वेद मन्त्रों (वेदवाक्यों) के अर्थ की यथार्थता और सत्यता के विषय में किसी को सन्देह प्रतीत होता हो तो हो, परन्तु (अन्धविश्वासग्रस्त निमग्न मानव समाज को) उपदेश देने की उत्सुकता, सुमधुर भाषा, वाक्‌चातुर्य द्वारा प्रतिपक्षी को निरुत्तर करने वाली हृदयस्पर्शिता, पवित्र ध्येय, निश्चयात्मक दृढ़ता, मन की सरलता, स्वाधीनचेता आचार्य और विचारक, तथा धर्म—भ्रम, मूर्तिपूजा, अर्थहीन दंभ, इत्यादि के घोर संकट में डूबे हुये देश का पुनरुत्थान करने की प्रबल आकांक्षा रखने वाला व्यक्ति अब कहीं भी नजर नहीं आयेगा। क्या इस अभाव की अनुभूति प्रत्येक व्यक्ति को नहीं होगी?

हमने सन् 1883 के अनेक समाचार—पत्रों की उपर्युक्त सम्मतियां आर्यजगत् की विख्यात पत्रिका ''वेदवाणी'' के फरवरी, 1982 अंक से ली हैं। उन दिनों इस पत्रिका का सम्पादन पं. युधिष्ठिर मीमांसक जी करते थे। पंडित मीमांसक जी ने वेदवाणी के अनेक अंकों में ऋषि दयानन्द जीवन विषयक दुर्लभ सामग्री प्रचुर मात्रा में उपलब्ध कराई है। जिनके पास वह सामग्री है, वस्तुतः वह अतीव भाग्यशाली है। हम वेदवाणी पत्रिका का धन्यवाद करते हैं। हम आशा करते हैं कि पाठक उपर्युक्त जानकारी से लाभान्वित होंगे। ओ३म् शम्।

प्रस्तुतकर्ता—मनमोहन कुमार आर्य

ऋषि दयानन्द को सबसे बड़ी श्रद्धांजलि होगी, समाज को जगाना और सुधार के लिए आंदोलन करना। यह हर आर्य का कर्तव्य है। महर्षि दयानन्द ने वेदों के ज्ञान की कुंजी हमारे हाथ में दी तथा वेदमंत्रों का अर्थ प्रकट करने का गुरु मंत्र भी दिया। हमें इस ज्ञान को धर्म के लिए प्रयोग में लाना चाहिए। वैदिक ज्ञान और आधुनिक विज्ञान के मेल से देश की उन्नति और समाज का कल्याण होगा।

महान मन्त्रद्रष्टा ऋषि दयानन्द के प्रति कुछ विख्यात लोगों की श्रद्धांजलियाँ

–मनमोहन कुमार आर्य

ऋषि दयानन्द ने वेदों का पुनरुद्धार किया और वेदों के प्रचार के लिये दिनांक 10 अप्रैल, 1875 को मुम्बई में आर्यसमाज नामक संगठन स्थापित किया। वह इतिहास में प्रमुख समाज सुधारक हुए हैं। उनके समाज सुधार का आधार वेद थे। कोई ऐसा अन्धविश्वास, पाखण्ड तथा सामाजिक कुरीति या परम्परा नहीं थी जिसका उन्होंने सुधार न किया हो। उन्होंने ईश्वर के सच्चे स्वरूप का प्रकाश किया। ईश्वर की उपासना की सरल, सुबोध एवं ईश्वर का साक्षात् कराने वाली विधि सन्ध्या पद्धति भी उन्होंने दी। देश की आजादी का मूल मन्त्र 'स्वदेशीय राज्य सर्वोपरि उत्तम होता है एवं सभी गुणों से युक्त विदेशी राज्य पूर्ण सुखदायक नहीं होता' भी उन्होंने दिया। ऋषि दयानंद सभी विख्यात महापुरुषों में सर्वतोमहान एवं अद्वितीय थे। उनके विषयक में कुछ प्रसिद्ध महापुरुषों की सम्मतियां प्रस्तुत कर रहे हैं।

माननीय रवीन्द्र नाथ टैगोर

मेरा सादर प्रणाम हो उस महान् गुरु दयानन्द को जिसकी दृष्टि ने भारत के आध्यात्मिक इतिहास में सत्य और एकता को देखा और जिसके मन ने भारतीय जीवन के सब अंगों को प्रदीप्त कर दिया। जिस गुरु का उद्देश्य भारतवर्ष को अविद्या, आलस्य और प्राचीन ऐतिहासिक तत्व के अज्ञान से मुक्त कर सत्य और पवित्रता की जागृति में लाना था, उसे मेरा बारम्बार प्रणाम है।

......मैं आधुनिक भारत के मार्गदर्शक उस दयानन्द को आदरपूर्वक श्रद्धांजलि देता हूं, जिसने देश की पतितावस्था में सीधे व सच्चे मार्ग का दिग्दर्शन कराया।

नेताजी सुभाषचन्द्र बोस (आजाद हिन्द फौज)

स्वामी दयानन्द सरस्वती उन महापुरुषों में से थे, जिन्होंने आधुनिक भारत का निर्माण किया और जो उसके आचार–सम्बन्धी पुनरुत्थान तथा धार्मिक पुनरुद्धार के उत्तरदाता है। हिन्दू समाज का उद्धार करने में आर्यसमाज का बहुत बड़ा हाथ है। रामकृष्ण मिशन ने बंगाल में जो कुछ किया, उससे कहीं अधिक आर्यसमाज ने पंजाब और संयुक्त प्रान्त में किया। यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण न होगा कि पंजाब का प्रत्येक नेता आर्यसमाजी है। स्वामी दयानन्द को मैं एक धार्मिक और सामाजिक सुधारक तथा कर्मयोगी मानता हूं। संगठन–कार्यों के सामर्थ्य और प्रयास की दृष्टि से आर्यसमाज अनुपम संस्था है।

फ्रेंच लेखक रोम्यां रोलां

ऋषि दयानन्द ने भारत के शक्ति–शून्य शरीर में अपनी दुर्द्धर्श शक्ति, अविचलता तथा सिंह–पराक्रम फूंक दिए हैं।

स्वामी दयानन्द सरस्वती उच्चतम व्यक्तित्व के पुरुष थे। वह पुरुष–सिंह उनमें से एक था जिन्हें यूरोप प्रायः उस समय भूला देता है जब कि वह भारत के सम्बन्ध में अपनी धारणा

बनाता है, किन्तु एक दिन यूरोप को अपनी भूल मानकर उसे याद करने के लिए बाधित होना पड़ेगा, क्योंकि उसके अन्दर कर्मयोगी, विचारक और नेता की उपयुक्त प्रतिभा का दुर्लभ सम्मिश्रण था।

दयानन्द ने अस्पृश्यता व अछूतपन के अन्याय को सहन नहीं किया और उससे अधिक उनके अपहृत अधिकारों का उत्साही समर्थक दूसरा कोई नहीं हुआ। भारत की स्त्रियों की शोचनीय दशा को सुधारने में भी दयानन्द ने बड़ी उदारता व साहस से काम लिया। वास्तव में राष्ट्रीय भावना और जन–जागृति के विचार को क्रियात्मक रूप देने में सबसे अधिक प्रबल शक्ति उसी की थी। वह पुनर्निर्माण और राष्ट्र–संगठन के अत्यन्त उत्साही पैगम्बरों में से था।

पंडित मदन मोहन मालवीय

महर्षि दयानन्द तपोमूर्ति थे। उन्होंने भारत में दिव्य ज्योति प्रकाशित की थी। उन्होंने हिन्दू समाज को पुनर्जन्म देने के सब प्रयत्न किये थे। उन्होंने मृतप्राय हिन्दू जाति में पुनः प्राणों का संचार किया था।

लोकमान्य बालगंगाधर तिलक

ऋषि दयानन्द जाज्वल्यमान नक्षत्र थे जो भारतीय आकाश पर अपनी अलौकिक आभा से चमके और गहरी निद्रा में सोये हुए भारत को जाग्रत किया।

जर्मन प्रोफैसर डा. विण्टरनीज

हमें वेदों के अध्ययन को प्रोत्साहन देने और यह सिद्ध करने में कि मूर्तिपूजा वेदसम्मत नहीं है, स्वामी दयानन्द के महान् उपकार को अवश्य स्वीकार करना चाहिए। आर्यसमाज के प्रवर्तक वर्तमान जाति–भेद की मूर्खता और उसकी हानियों के विरुद्ध अपने अनुयायियों को तैयार करने के अतिरिक्त यदि और कुछ भी न करते तो भी वह वर्तमान भारत के बड़े नेता के रूप में अवश्य सम्मान पा जाते।

साधु टी.एल. वास्वानी

मेरे निर्बल शब्द ऋषि की महत्ता का वर्णन करने में अशक्त हैं। ऋषि के अप्रतिम ब्रह्मचर्य, सत्य–संग्राम और घोर तपश्चर्या के लिए अपने हृदय के पूज्य भावों से प्रेरित होकर मैं उनकी वन्दना करता हूं।

मैं ऋषि को शक्ति–सुत अर्थात् कर्मवीर योद्धा समझकर उनका आदर करता हूं। उनका जीवन राष्ट्र–निर्माण के लिए स्फूर्तिदायक, बलदायक और माननीय है।

दयानन्द उत्कट देशभक्त थे, अतः मैं राष्ट्रवीर समझकर उनकी वन्दना करता हूं।

प्रो. एफ. मैक्समूलर, लन्दन

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने हिन्दू–धर्म के सुधार का बड़ा कार्य किया और जहां तक समाज–सुधार का सम्बन्ध है, वह बड़े उदार हृदय थे। वे अपने विचारों को वेदों पर आधारित और उन्हें ऋषियों के ज्ञान पर अवलम्बित मानते थे। उन्होंने वेदों पर बड़े–बड़े भाष्य किये, जिससे मालूम होता है कि वे पूर्ण अभिज्ञ थे। उनका स्वाध्याय बड़ा व्यापक था।

पंजाब केसरी लाला लाजपत राय

स्वामी दयानन्द मेरे गुरु हैं। मैंने संसार में केवल उन्हीं को गुरु माना है। वह मेरे धर्म के पिता हैं और आर्यसमाज मेरी धर्म की माता है। इन दोनों की गोद में मैं पला। मुझे इस बात का गर्व है कि मेरे गुरु ने मुझे स्वतन्त्रतापूर्वक विचार करना, बोलना और कर्तव्य–पालन करना

सिखाया तथा मेरी माता ने मुझे एक संस्था में बद्ध होकर नियमानुवर्तिता का पाठ दिया।

मैडम ऐनी बेसेण्ट

स्वामी दयानन्द ही पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने ''हिन्दुस्तान हिन्दुस्तानियों के लिए'' का नारा लगाया था। आर्यसमाज के लिए मेरे हृदय में शुभ इच्छायें हैं और उस महान् पुरुष के लिए, जिसका आप आर्य आदर करते हैं, मेरे हृदय में सच्ची पूजा की भावना है।

रेवरेण्ड सी.एफ. एण्डरुज

स्वामी दयानन्द के उच्च व्यक्तित्व और चरित्र के विषय में निस्सन्देह सर्वत्र प्रशंसा की जा सकती है। वे सर्वथा पवित्र तथा अपने सिद्धान्तों के अनुसार आचरण करने वाले महानुभाव थे। वह सत्य के अत्यधिक प्रेमी थे।

श्री अरविन्द घोष

वह दिव्य ज्ञान का सच्चा सैनिक, विश्व को प्रभु की शरण में लाने वाला योद्धा, और मनुष्य व संस्थाओं का शिल्पी तथा प्रकृति द्वारा आत्मा के मार्ग में उपस्थित की जाने वाली बाधाओं का वीर विजेता था और इस प्रकार मेरे समक्ष आध्यात्मिक क्रियात्मकता की एक शक्ति–सम्पन्न मूर्ति उपस्थित होती है। इन दो शब्दों का, जो कि हमारी भावनाओं के अनुसार एक–दूसरे से सर्वथा भिन्न हैं, मिश्रण ही दयानन्द की उपयुक्त परिभाषा प्रतीत होती है। उसके व्यक्तित्व की व्याख्या की जा सकती है।

एक मनुष्य, जिसकी आत्मा में परमात्मा है, चर्म–चक्षुओं में दिव्य तेज है और हाथों में इतनी शक्ति है कि जीवन–तत्व से अभीष्ट स्वरूप वाली मूर्ति घड़ सके तथा कल्पना को क्रिया में परिणत कर सके। वह स्वयं दृढ़ चट्टान थे। उनमें दृढ़ शक्ति थी कि चट्टान पर घन चलाकर पदार्थों को सुदृढ़ व सुडौल बना सकें। प्राचीन सभ्यता में विज्ञान के गुप्त भेद विद्यमान हैं, जिनमें से कुछ को अर्वाचीन विद्याओं ने ढूंढ लिया है, उनका परिवर्तन किया है और उन्हें अधिक समृद्ध व स्पष्ट कर दिया है, किन्तु दूसरे अभी तक निगूढ़ ही बने हुए है। इसलिए दयानन्द की इस धारणा में कोई अवास्तविकता नहीं है कि वेदों में विज्ञान–सम्मत तथा धार्मिक सत्य निहित है।

वेदों का भाष्य करने के बारे में मेरा विश्वास है कि चाहे अंतिम पूर्ण अभिप्राय कुछ भी हो, किन्तु इस बात का श्रेय दयानन्द को ही प्राप्त होगा कि उसने सर्वप्रथम वेदों की व्याख्या के लिए निर्दोष मार्ग का आविष्कार किया था। जंगली लोगों की रचना कही जाने वाली पुस्तक के भीतर उसके धर्म–पुस्तक होने का वास्तविक अनुभव उन्होंने ही किया था। ऋषि दयानन्द ने उन द्वारों की कुंजी प्राप्त की है, जो युगों से बन्द थे और उसने पटे हुए झरनों का मुख खोल दिया।

ऋषि दयानन्द के नियम–बद्ध कार्य ही उनके आत्मिक शरीर के पुत्र हैं, जो सुन्दर, सुदृढ़ और सजीव हैं तथा अपने कर्ता की प्रत्याकृति हैं। वह एक ऐसे पुरुष थे जिन्होंने स्पष्ट और पूर्ण रीति से जान लिया था कि उन्हें किस कार्य के लिए भेजा गया है।

कर्नल अल्काट (थियोसाफिकल सोसायटी के संस्थापक)

उनकी मृत्यु से भारत–माता ने अपने योग्यतम पुत्रों में से एक को खो दिया।

ब्रिटेन के पूर्व प्रधानमंत्री रेमजे मैकडानल्ड

आर्यसमाज समस्त संसार को वेदानुयायी बनाने का स्वप्न देखता है। स्वामी दयानन्द ने इसे जीवन और सिद्धान्त दिया। उनका विश्वास था कि आर्य जाति चुनी हुई जाति, भारत चुना हुआ देश और वेद चुनी हुई धार्मिक पुस्तक है।

सर यदुनाथ सरकार

जब भारत के उत्थान का इतिहास लिखा जायेगा तो नंगे फकीर दयानन्द सरस्वती को उच्चासन पर बिठाया जायेगा।

सर सैयद अहमद खां

स्वामी दयानन्द सरस्वती के अनुयायी उन्हें देवता–तुल्य जानते थे, और वह निस्सन्देह इसी योग्य थे। वह इतने विद्वान् और अच्छे आदमी थे कि प्रत्येक धर्म के अनुयायियों के लिए सम्मान के पात्र थे। उनके समान व्यक्ति समूचे भारत में इस समय कोई नहीं मिल सकता। अतः प्रत्येक व्यक्ति का उनकी मृत्यु पर शोक करना स्वाभाविक है।

हम समझते हैं कि ऋषि दयानन्द के आगामी ऋषि बोध पर्व पर उपर्युक्त पंक्तियों में दिए गए उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व को जानकर हम उत्साह एवं प्रेरणा ग्रहण कर सकते हैं और वेद प्रचार के कार्य को जारी रखते हुए आगे बढ़ सकते हैं।

सरदार बल्लभ भाई पटेल

स्वामी दयानन्द जी के राष्ट्र के प्रेम के लिए उनके द्वारा उठाये गये कष्टों, उनकी हिम्मत, ब्रह्मचर्य–जीवन तथा कई गुणों के कारण मुझे उनके प्रति आदर है। आज देश में जो भी कार्य चल रहे हैं उनका मार्ग स्वामी जी वर्षों पूर्व बना गये थे। ऐसे महापुरुष कभी मरते नहीं अमर होते हैं उनका जीवन हमारे लिए आदर्श बन जाता है।

डॉ० राजेन्द्र प्रसाद

महर्षि दयानन्द के उपदेशों में करोड़ों लोगों को नवजीवन, नवचेतना और नया दृष्टिकोण प्रदान किया। उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए हमें व्रत लेना चाहिए कि उनके बताये मार्ग पर चलकर हम देश को सुखी, शांतियुक्त और वैभवपूर्ण बनायेंगे।

सर्वपल्ली डॉ० राधाकृष्णन

स्वामी दयानन्द एक महान समाज सुधारक और प्रखर क्रान्तिकारी महापुरुष थे ही पर साथ ही उनके हृदय में सामाजिक अन्यायों को उखाड़ फेंकने की प्रचण्ड अग्नि भी विद्यमान थी। उनकी शिक्षाओं का हमारे लिए भारी महत्व है। उन्होंने यह महान संदेश दिया था कि हम सत्य की कसौटी पर कसकर ही किसी बात को स्वीकार करें।

अनन्तशयनम् आय्यंगर

गांधीजी राष्ट्र के पिता थे तो मैं महर्ष दयानन्द सरस्वती राष्ट्र के पितामह थे। वे राष्ट्रीय प्रवृत्ति और स्वाधीनता के आन्दोलन के आद्य प्रवर्तक थे। गांधी जी उन्हीं के पद चिन्हों पर चले। यदि महर्षि दयानन्द हमें मार्ग न दिखाते तो अंग्रेजों के शासन में सारा बंगाल, ईसाई और सारा पंजाब मुसलमान बन जाता। महर्षि ने सारे विश्व को आर्य बनाने की प्रेरणा दी। महर्षि दिव्य महापुरुष थे। उन्होंने ईसाईमत और इस्लाम के हमलों से देश की रक्षा की। आर्यसमाज देश की एकता के लिए कार्य कर रहा है।

डॉ० पट्टाभिसीता रमैया

गांधी से पूर्व महर्षि दयानन्द ने राष्ट्र के लिए महान कार्य किया। उन्होंने भारतीयों को स्वराज का मार्ग बताया। वे पूर्ण पुथ्ष और भारत के युग निर्माता थे।

सुखस्य मूलं ब्रह्मचर्यम्

—ब्र० विशाल आर्यः (आर्ष गुरु०महा० देलवाड़ा, आबू पर्वत)

ओं ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत।
इन्द्रो ह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वराभरत्।।
अथर्व० १,५१६

अर्थात्—ब्रह्मचर्य (इन्द्रिय दमन, वेदाध्ययन) तथा तप से विद्वान लोग मृत्यु को (मृत्यु के कारण निरूत्साह निर्बलता आदि को) नष्ट कर देते हैं। ब्रह्मचर्य (नियमपालन) से सूर्य या आत्मा ने सब पदार्थों या इन्द्रियों के लिए सुख अर्थात् प्रकाश को धारण किया है।

प्रश्न—ब्रह्मचर्य क्या है?

उत्तर—जब तक इसे ठीक—ठाक न समझ लिया जाये तब तक इससे पूर्ण लाभ उठाना और बह्मचर्य की रक्षा करना असम्भव है। बह्मचर्य यह दो शब्दों से बना है—

1. ब्रह्म—इसका अर्थ है—ईश्वर, वेद, ज्ञान और वीर्य आदि।
2. चर्य—इसका अर्थ है—चिन्तन, अध्ययन, उपार्जन, रक्षणादि।

हमारे ऋषि—मुनियों ने ब्रह्मचर्य की तपस्या के बल पर ही मृत्यु पर विजय प्राप्त की थी। किसी अंग्रेजी लेखक ने ब्रह्मचर्य के ऊपर वर्णन करते हुए लिखा है कि—''Brahamacharya is life and sexuality is death''. अर्थात बह्मचर्य ही जीवन है तथा वीर्यनाश ही मृत्यु है।

जिस प्रकार तिल से तेल निकाल दिया जाए तो पीछे खल ही अवशिष्ट रहती है, उसी प्रकार यदि मानव शरीर से वीर्य निकाल दिया जाए तो वह निरूत्साह, निर्बलता आदि मानसिक व शारीरिक रोगों से ग्रस्त हो जाते हैं। जिस प्रकार दीपक में तेल होने पर ही जलता है उसी प्रकार मानव शरीर में सुरक्षित वीर्य होने पर उसकी ऊर्ध्वगति होकर प्रखर बुद्धि, बलवान, शूरवीर, साहसी गम्भीर, धैर्यवान इत्यादि गुण प्राप्त होते है।

संसार में देखा जाए तो बल तीन प्रकार का होता है—

1. शरीर का बल
2. ज्ञान का बल
3. मन का बल

इन तीनों बलों में मनोबल अर्थात् आत्मबल सबसे श्रेष्ठ बल है। यदि हममें शरीरबल व ज्ञानबल होगा तो मनोबल अपने—आप हममें उत्पन्न हो जायेगा।

रसाद्रकां ततो मांसं मांसान्मेदा प्रजायते।
सदस्याऽस्ति ततो मज्जा, मज्ज्या शुक्रसंभवः।।
(श्री सुश्रुताचार्य)

मनुष्य जो कुछ भोजन करता है वह प्रथम पेट में जाकर पचने लगता है और उसका रस बनता है। उस रस का पांच दिन तक पाचन होकर उससे रक्त पैदा होता है। रक्त(खून) का भी पांच दिन तक पाचन होकर उससे मांस बनता है। पाचन की यह क्रिया एक सेकेण्ड भी बंद नहीं रहती है। इसी प्रकार पांच दिन बाद मांस से मेदा, मेदा से अस्थि, अस्थि से मज्जा और मज्जा से सप्तम् सार पदार्थ वीर्य बनता है। फिर उस वीर्य का पाचन नही होता। यही वीर्य फिर औजस रूप में सम्पूर्ण शरीर में चमकता है। क्योंकि 100 बूंद रक्त से एक बूंद वीर्य का निर्माण होता है।

वीर्य रक्षा का प्रताप–

1. 176 वर्ष का ब्रह्मचारी भीष्म कुरूक्षेत्र के आंगन में वह घमासान युद्ध मचाता है कि प्रतिदिन 10–10 हजार सैनिकों को वीरगति प्राप्त कराता है ऐसी अवस्था देख सारा पाण्डव–दल तक घबरा जाता है।
2. सच्चे ब्रह्मचारी युग प्रवर्तक महामानव दिव्य दयानन्द का आदर्श जीवन भी हमारे सन्मुख है। वे भी आजीवन ब्रह्मचारी रहे। अरे ऋषि दयानन्द को उनके विरोधियों ने सोलह बार विष दिया पर अन्तिम बार जोधपुर में नन्हीं जान नामक वैश्या के कहने पर स्वामी जी के सेवक नीच जगन्नाथ ने दूध में काँच व विष मिलाकर महर्षि दयानन्द को पिला डाला। तब स्वामी जी के शरीर से विष फूट–फूटकर निकलने लगा, उस अवस्था को देखकर डॉक्टर सूरजमल घबराए और चिल्ला उठे कि ऐसा भयंकर विष दिया गया है कि किसी अन्य मनुष्य को दिया जाता तो वह पांच मिनट में ही मर जाता। तो ये है ब्रह्मचारी का ब्रह्मचर्य।

महर्षि पतंजलि योगदर्शन के दूसरे अध्याय के 38 वे सूत्र में लिखते हैं कि– ब्रह्मचर्य प्रविष्ययां वीर्यलाभः। अर्थात् ब्रह्मचर्य की सिद्धि होने पर बल का लाभ होता है।

ऋषि दयानन्द ने ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में कहा है कि ब्रह्मचर्य सेवन यह बात होती है कि जब मनुष्य बाल्यावस्था में विवाह न करें, उपेस्थेन्द्रिय का संयम रखें: वेदादि शास्त्रों को पढ़ता–पढ़ाता रहे, विवाह के पीछे ऋतुगामी बना रहे और परस्त्री–गमन आदि व्यभिचार को मन, कर्म, वचन से त्याग देवे, इन बातों पर ध्यान देने से शरीर व बुद्धि व बल(वीर्य) बढ़ता है और मनुष्य सदा आनन्द में रहता है।

ब्रह्मचर्य की वर्तमान दशा–

अहा हाः क्या महान् इस ब्रह्मचर्य की महिमा है परन्तु आज हम इस मानवता को भूलकर नीचता की धूलि में दास्यभाव से विचरण कर रहे हैं। कहाँ हमारे वीर्यवान् सामर्थ्य निवीर्य और पद दलित दुर्बल संतान ओह! कितना यह आकाश–पाताल का अन्तर हो गया है। हमारा कितना भयंकर पतन हुआ है? इसमें थोड़ा सा भी संदेह नही कि हमारा जो यह भीषण पतन हुआ है इसका एक मात्र कारण ब्रह्मचर्य का ह्रास ही है। अतः हमें सदैव अष्टमैथुन से बचना चाहिए। क्योंकि वीर्यनाश करने वालों के लक्षण दूर से व्यक्ति में दिख जाते है, जैसे–आँख व गाल अन्दर धंस जाती है। बाल पकने लगते हैं। रात्रि में स्वप्नदोष का होना इत्यादि लक्षण ब्रह्मचर्य हनन करने वालों के दिख पड़ते हैं। सबसे बड़ी बात यह कि तरूणावस्था आने से पूर्व ही वृद्धावस्था सा प्रतीत होने लगता है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने कालजयी अमरग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में तृतीय समुल्लास में ब्रह्मचर्य के तीन प्रकार बताए हैं–

1. कनिष्ठ ब्रह्मचर्य (24 वर्ष तक विवाह)
2. मध्यम ब्रह्मचर्य (44 वर्ष तक विवाह)
3. उत्तम ब्रह्मचर्य (48 वर्ष तक विवाह)

और फिर स्वामीजी द्वितीय समुल्लास में लिखते हैं।

''देखो जिसके शरीर में सुरक्षित वीर्य रहता है तब उसका आरोग्य, बुद्धि, बल, पराक्रम बढ़ के बहुत सुख की प्राप्ति होती है। और जिसके शरीर में वीर्य नहीं होता वह नपुंसक, महाकुलक्षणी और जिसको प्रमेह रोग होता है वह दुर्बल, निस्तेज, निर्बुद्धि, उत्साह, धैय, बल, पराक्रमादि गुणों से रहित होकर नष्ट हो जाता है।

ब्रह्मचर्य महिमा–

1. सुखस्य मूलं ब्रह्मचर्यम्।
2. बलस्य मूलं ब्रह्मचर्यम्।
3. विद्याया मूलं ब्रह्मचर्यम्।
4. आरोग्य मूलं ब्रह्मचर्यम्।

कर्मणा मनसा वाचा सर्वावस्थासु सर्वदा।

सर्वत्र मैथुनत्यागो ब्रह्मचर्य प्रचक्षते।।
याज्ञवल्क्य संहिता

सर्व अवस्था में मन, वचन और कर्म तीनों द्वारा सदैव मैथुन का त्याग ही ब्रह्मचर्य कहलाता है।

हमारे गुरूकुल आबू पर्वत में आजीवन ब्रह्मचारी परमपूज्य आचार्य महीपाल जी गुरूकुल के विद्यार्थियों को उपदेशामृत का पान कराते हुए अपनी अमृतवाणी से कहते हैं कि– ब्रह्मचर्य जीवन का हीरा है। उसकी रक्षा करते हुए मर जाना ठीक है, परन्तु उस पर आँच नही आनी चाहिए। उससे बढ़कर संसार में मेरे लिए कोई प्रिय वस्तु नहीं है। शुभ–कर्मों के सहारे ही मनुष्य सुखी हो सकता है, अन्यथा नहीं।

अब अन्त में मैं एक बात बताकर अपनी लेखनी को विराम देना चाहता हूँ

मरणं बिन्दुपातेन जीवनं बिन्दुधारणात्।

अर्थात–बिन्दुनाश(वीर्यनाश) ही मृत्यु है और बिन्दुरक्षण(वीर्यरक्षण) ही जीवन है।

।।इति।।

रविवारीय साप्ताहिक सत्संग हेतु कार्यक्रम

प्रिय बन्धुओं,

यह अनुभव किया गया है कि आर्य समाजों के कार्यक्रमों में युवाओं की उपस्थिति बहुत कम होती है जो एक चिंता का विषय है। इसका कारण यह है कि साप्ताहिक सत्संगों में युवाओं की रुचि के अनुसार न तो कार्यक्रम ही बनाये जाते हैं और न ही उन्हें अपनी बात कहने का अवसर दिया जाता है। कुछ आर्य समाजों ने वैदिक विद्वानों से विचार विमर्श करके इस समस्या के समाधान हेतु अपने सत्संग के कार्यक्रमों में निम्न सारिणी के अनुसार परिवर्तन किये हैं जिसके सुखद परिणाम अनुभव किये गये हैं। आपसे विनम्र अनुरोध है कि आप भी अपने आर्य समाज में इस समय सारणी को लागू करके देखें ताकि नव–युवकों/युवतियों को उचित प्रतिनिधित्व मिल सके और वह भविष्य में आर्य समाज की बागडोर सम्भाल सकें।

यज्ञ प्रार्थना सहित यज्ञ	30 मिनट
बच्चों/युवाओं की प्रस्तुति	10 मिनट
बच्चों/युवाओं हुतु उद्बोधन	10 से 15 मिनट
ईश्वर भक्ति के भजन	10 मिनट
सत्संग उपदेश–	25 मिनट
ध्यान	10 मिनट
शान्तिपाठ	

वैदिक साधन आश्रम तपोवन में होने वाले शिविरों, उत्सवों तथा समस्त कार्यक्रमों का विवरण

वर्ष–2020 (1 जनवरी से 31 दिसम्बर 2020 तक)

महीना	कार्यक्रम का विवरण	अवधि	विद्वान का विवरण
फरवरी एवं मार्च	योग एवं चतुर्वेद परायण यज्ञ	18 फरवरी से 8 मार्च	स्वामी चितेश्वरानन्द सरस्वती
नोट :	सभी प्रतिभागी प्रातः 3 बजे उठने का अभ्यास बना लें। अपने रजिस्ट्रेशन हेतु स्वामी विशुद्धानन्द जी, मोब. 7579006599 अथवा मैनेजर तपोवन आश्रम, मोब. 7310641586 पर सम्पर्क करें।		
अप्रैल			
	1. धर्म शिक्षा की परीक्षाओं का आयोजन	12 अप्रैल	उत्तराखण्ड विद्यार्य सभा द्वारा
	2. योग प्रशिक्षण शिविर(प्रथम स्तर)	22 से 29 अप्रैल	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
मई	तपोवन आश्रम का ग्रीष्मोत्सव,	13 से 17 मई	
जून	1. युवतियों हेतु जीवन निर्माण शिविर	30 मई से 3 जून	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
	2. युवाओं हेतु जीवन निर्माण शिविर	10 से 14 जून	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
जुलाई	वानप्रस्थियों के लिए योग शिविर	5 से 19 जुलाई	स्वामी अमृतानन्द जी
अगस्त	दर्शनों का अध्ययन	8 से 30 अगस्त	स्वामी आशुतोष जी
सितम्बर	दर्शनों का अध्ययन	15 से 30 सितम्बर	आचार्य सतेन्द्र जी
अक्टूबर	गायत्री यज्ञ	7 से 18 अक्टूबर	पंडित सूरतराम शर्मा जी
नवम्बर	1. योग प्रशिक्षण शिविर (प्रथम स्तर)	5 से 12 नवम्बर	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
	2. वैदिक संध्या प्रशिक्षण शिविर	22 से 28 नवम्बर	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
दिसम्बर	1. सांख्य दर्शन सार(प्रथम भाग) शिविर	1 से 8 दिसम्बर	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
	2. यज्ञ प्रशिक्षण शिविर	13 से 20 दिसम्बर	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
नोट :	उपरोक्त कार्यक्रमों की तिथि एवं विद्वानों के नामों में तपोवन आश्रम सोसाइटी के द्वारा परिवर्तन किया जा सकता है जिसकी सूचना पत्रिका के माध्यम से पूर्व में ही प्रकाशित कर दी जायेगी।		

freedom to work...

DELITE KOM LIMITED

All dimensions are subject to change without any prior notice because of continuous research & development. All designs shown here are proprietary: Any infringement is liable for prosecution.

DELITE KOM LIMITED

Kukreja House, IInd Floor, 46, Rani Jhansi Road, New Delhi-110055
Ph. : 011-46287777, 23530288, 23530290, 23611811 **Fax :** 23620502 **Email :** delite@delitekom.com

ISO 9001 DNV CERTIFIED

डाक पंजीयन UA/DO/DDN/75/2018-2020 समाचार पत्र पंजीयन 51900/88

With Best
Compliments From

MUNJAL
SHOWA

हाई क्वालिटी
शॉकर्स

TPM Certified

ISO / TS - 16949 - 2002 Certified

ISO - 14001 Certified

OHSAS - 18001 Certified

हमारे उत्पाद

- स्ट्रट्स / गैस स्ट्रट्स
- शॉक एब्जॉर्बर्स
- फ्रन्ट फोर्कस
- गैस स्प्रिंगस / विन्डो बैलेन्सर्स

मुंजाल शोवा लिमिटेड भारत की प्रमुख शॉक एब्जॉर्बस बनाने वाली कंपनी है जिसकी रेंज फ्रन्ट फोर्कस, स्ट्रट्स (गैस चार्जड और कन्वेन्शनल) और गैस स्प्रिंगस की टू व्हीलर/फोर व्हीलर उदयोगों को उपलब्ध कराती है। कंपनी गुणवत्ता और सुरक्षा के उच्चतम मानकों के अनुरूप अपने सभी उत्पादों का निर्माण करती है। कंपनी के उत्पाद आरामदायक और सुरक्षित सवारी देते हैं और ये टिकाऊ और विश्वसनीय भी हैं। मुंजाल शोवा लिमिटेड, QS 9000, TS–16949, ISO 14001, OHSAS 18001 और TPM प्रमाणित कंपनी है। मुंजाल शोवा के तीन मैन्युफैक्चरिंग प्लॉट हैं – गुड़गाँव, मानेसर (हरियाणा) और हरिद्वार (उत्तराखण्ड)। मुंजाल शोवा लिमिटेड का शोवा कार्पोरेशन जापान के साथ तकनीकी और वित्तीय सहयोग करार है।

हमारे ख्यातिप्राप्त ग्राहक

Hero HONDA HONDA MARUTI SUZUKI YAMAHA

मुंजाल शोवा लिमिटेड

प्लॉट नं. 9–11, मारुति इंडस्ट्रियल एरिया
गुड़गाँव–122015, हरियाणा
दूरभाष :
0124–2341001, 4783000, 4783100
ईमेल : msladmin@munjalshowa.net
वेबसाइट : www.munjalshowa.net

MUNJAL
SHOWA

वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी के लिए प्रकाशक मुद्रक प्रेम प्रकाश द्वारा सरस्वती प्रेस, 2, ग्रीन पार्क, निरंजनपुर, देहरादून–248001 (उत्तराखण्ड) से मुद्रित एवं वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी (रजि.), नालापानी, देहरादून (उत्तराखण्ड) से प्रकाशित।
संपादक– कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री

सरस्वती प्रेस, देहरादून, ई-मेल : akhilg333@gmail.com